मूल्य: ₹30 मई–जून 2025 आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

भाकृअनुप ICAR

फल फूल

बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ

- सौंदर्य एवं गुणों से भरपूर अपराजिता
- पोषण वाटिका से स्वास्थ्य समृद्धि
- नीबूवर्गीय फलों की नवीनतम किस्में
- सागौन उत्पादन से आय में वृद्धि

/InAgrisearch | /user/icarindia | officialicarindia | www.icar.org.in | /icarindia

भाकृअनुप द्वारा वर्ष 2024-25 में उच्च उपज देने वाली जलवायु अनुकूल एवं जैव संवर्धित बागवानी किस्मों की झलकियां

टमाटर पूसा शक्ति

गेंदा-पूसा बहार

चकोतरा-अर्का चंद्र

मंडूकापर्णी-अर्का प्रभावी

आम-अम्बिका

अनार-सोलापुर अनारदाना

अमरूद-अर्का किरण

बेल-स्वर्ण वसुधा

टमाटर-पूसा टमाटर हाइब्रिड 6

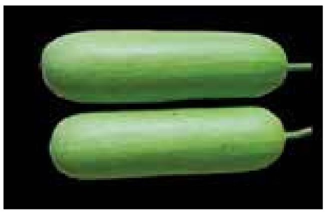
लौकी-काशी शुभ्रा

भिण्डी-अर्का निकिता

भारतीय बीन-काशी बौनी सेम-207

खरबूजा-थार महिमा

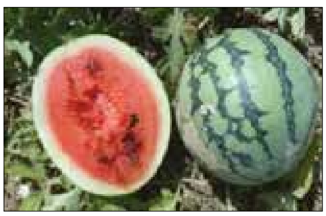
तरबूज-थार तृप्ति

आलू-कुफरी चिपसोना-5

आलू - कुफरी जमुनिया

जायफल-केरल श्री

छोटी इलायची-आईआईएसआर कावेरी

सौंफ-आरएफ-290

मेंगो अदरक-आईआईएसआर अमृत

कोकोआ-विट्ठल कोकोआ हाइब्रिड-2

काजू-नेत्र गंगा (एच-130)

नारियल-कल्प शताब्दी

ट्यूबरोज-अर्का वैभव

क्रॉसेंड्रा-अर्का श्रेया

ग्लैडियोलस अर्का-अमर

वेलवेट बीन्स-अर्का दक्ष

अश्वगंधा-अर्का अश्वगंधा

स्रोत: भाकृअनुप की वार्षिक रिपोर्ट 2024-25

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय द्विमासिकी

वर्ष: 46, अंक: 3, मई-जून 2025

संपादन सलाहकार समिति

1. **डॉ. एस के सिंह** — **अध्यक्ष**
   उपमहानिदेशक (बागवानी)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
2. **डॉ. अनुराधा अग्रवाल** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
3. **डॉ. टी दामोदरन** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ
4. **डॉ. जगदीश राणे** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान
5. **डॉ. मारकंडे सिंह** — **सदस्य**
   विभागाध्यक्ष
   पुष्प विज्ञान विभाग, भाकृअनुप-भाकृअनुसं, नई दिल्ली
6. **प्रो. राजेश्वर सिंह चंदेल** — **सदस्य**
   कुलपति
   डॉ. वाई एस परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौनी, हिमाचल प्रदेश
7. **श्री शरद पांडे** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री कंवल सिंह चौहान** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
9. **सुश्री सुनीता अरोड़ा** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिंदी संपादकीय एकक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

प्रधान संपादक
डा. अनुराधा अग्रवाल

संपादक
सुनीता अरोड़ा

संपादन सहयोग
गजेन्द्र

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
भूपेन्द्र दत्त

दूरभाष: 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12

एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00
विशेषांक : रु. 100.00

आवरण चित्र : शाही लीची

E-mail : phalphul@gmail.com

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

विषय सूची

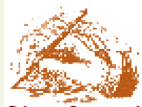

निदेशक की कलम से

बागवानी परिदृश्य में बदलाव–**अनुराधा अग्रवाल**

संभावनाएं
लोंगन की लाभकारी खेती 4
सुनील कुमार, बिकास दास, महेश कुमार धाकड़, अशोक धाकड़ **और** रोहित कुमार

आमदनी
नीबूवर्गीय फलों की नवीनतम किस्में 6
मुकेश शिवरान, निमिषा शर्मा, राधा मोहन शर्मा **और** अनिल कुमार दुबे

पौष्टिक
गुणों से भरपूर ककोड़ा 8
महेश चौधरी, अनोप कुमारी **और** प्रकाश महला

मनमोहक
सौंदर्य एवं गुणों से भरपूर अपराजिता 10
शिवानी, अनिल कुमार सिंह, अंजना सिसोदिया, विनीता सिंह **और** मनदीप सिंह

अनूठा
फायदेमंद है तेन्दू फल 12
तनिष्का चौधरी **और** योगेश कुमार

कृषिवानिकी
सागौन उत्पादन से आय में वृद्धि 14
संग्राम भा चव्हाण, उथप्पा ए. आर., अमृत मोरडे, वनिता सालुंखे **और** विजयसिंह काकडे़

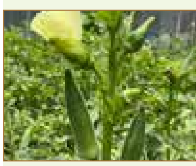

उपयोगिता
बागवानी में आर्बस्कुलर माइकोरिज़ल कवक की भूमिका 17
काव्या टी **और** गीता सिंह

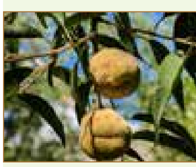

संरक्षण
प्रकृति की मूल्यवान धारोहर है बेहमी 20
अरुण कुमार, इंद्र देव, दुर्गा प्रशाद भंडारी **और** दीपिका

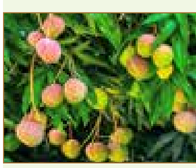

उपाय
आम में चूर्णिल आसिता रोग का प्रबंधन 23
प्रिंस कुमार गुप्ता, देवांशु देव **और** मुकेश कुमार

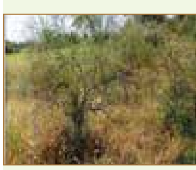

महत्व
बहुपयोगी पादप फोग का संरक्षण 25
उत्तम शिवरान, पुष्पा उज्जैनिया, एम आर चौधरी **और** कमलेश कुमार यादव

विषय सूची

नई सोच 27
पोषण वाटिका से स्वास्थ्य समृद्धि
मीनाक्षी तिवारी, अनीता शुक्ला, निमिषा अवस्थी **और** फूलकुमारी

नियंत्रण 30
शीतोष्ण फसलों में कुरमुला कीट का प्रबंधन
सुमन साँजटा, उर्वी शर्मा, शर्मिष्ठा ठाकुर **और** कुलदीप सिंह वर्मा

जानकारी 32
मई-जून माह के बागवानी कार्य
हरे कृष्ण, नृपेन्द्र विक्रम सिंह, अरविंद कुमार सिंह **और** शुभम कुमार तिवारी

आवरण-II
नई किस्में
भाकृअनुप द्वारा वर्ष 2024-25 में उच्च उपज देने वाली जलवायु अनुकूल एवं जैव संवर्धित बागवानी किस्मों की झलकियां

आवरण-III
सार-समाचार
- **बांस चारकोल त्वचा की सुरक्षा का प्राकृतिक उपाय**
- **मशरूम से बनी इको-फ्रेंडली टाइलें**

निदेशक की कलम से

बागवानी परिदृश्य में बदलाव

आधुनिक बागवानी टिकाऊ कृषि पद्धतियों, सटीक कृषि तकनीकों और उच्च मूल्य वाली फसलों के विकास के साथ ही अद्यतन प्रौद्योगिकियों और कृषि विपणन के लिए ऑनलाइन प्लेटफार्म पर आधारित है।

बागवानी में फसल विविधता के लिए फलों, सब्जियों, फूलों, जड़ी-बूटियों, औषधीय पौधों और विभिन्न मसालों की मिली-जुली खेती करके आय को बढ़ाया जा सकता है। बागवानी में उच्च मूल्य के विदेशी फलों, औषधीय एवं सगंधीय पौधों, सजावटी और व्यावसायिक फसलों को उगाने का रुझान देखा गया है। रंग-बिरंगे फल, फूल, सब्जियों एवं अन्य बागवानी उत्पादों की ओर कृषकों का उत्साह बढ़ा है। आज हमारे कृषक पारंपरिक बागवानी फसलों के साथ-साथ उच्च बाजार मूल्य वाले विदेशी फलों जैसे ड्रैगन फ्रूट, स्ट्राबेरी इत्यादि की बागवानी कर रहे हैं।

सतत एवं जैविक कृषि पद्धतियों के लिए कीटनाशकों और उर्वरकों के प्रयोग को कम करना, जल संरक्षण और मृदा स्वास्थ्य में सुधार आवश्यक है। बागवान अब ड्रोन, जीपीएस और सेंसर आधारित यंत्रों का प्रयोग करके मृदा स्वास्थ्य, सिंचाई और कीट/व्याधियों का नियंत्रण करते हैं। रोपण समय सारणी, उर्वरकों का प्रयोग या सिंचाई समय सारणी के डेटा विश्लेषण द्वारा कुशल संसाधन प्रबंधन करने से उत्पादकता में निश्चित सुधार होता है।

ऑनलाइन प्लेटफार्म और विपणन द्वारा कृषक सीधे उपभोक्ताओं से संपर्क करके बिचौलियों की मनमानी से बच सकते हैं। मूल्य संवर्धन और आकर्षक पैकेजिंग द्वारा बागवानी उत्पादों की निधानी आयु बढ़ाकर इनके विपणन को मुनाफे का व्यापार बना सकते हैं।

भारत सरकार भी बागवानी को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न योजनाओं और पहलों द्वारा प्रोत्साहन दे रही है जैसे वित्तीय सहायता प्रदान करना, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और ढांचागत विकास आदि। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न संस्थान भी भारतीय जलवायु एवं परिस्थितियों के अनुसार बागवानी फसलों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए नई प्रौद्योगिकियों और किस्मों का विकास कर रहे हैं।

अर्का बागवानी ऐप (आईसीएआर-आईआईएचआर द्वारा विकसित) द्वारा कृषकों को आधुनिक कृषि क्रियाओं, कीट/रोग प्रबंधन और बाजार के रुझान की सूचना मिलती है। बागवानी उत्पादों का उचित भंडारण हो, प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन हो, बाजार की सुलभ उपलब्धता हो, इस दिशा में लगातार प्रयास जारी है। इसका उद्देश्य किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य उपलब्ध करवाना, बाजार की व्यवस्था, उत्पादों में मूल्य संवर्धन, भंडारण की सुविधा और बेहतर पैकेजिंग की व्यवस्था सुनिश्चित करना है।

(अनुराधा अग्रवाल)

लोंगन की लाभकारी खेती

सुनील कुमार[1], बिकास दास[2], महेश कुमार धाकड़[3], अशोक धाकड़[4] और रोहित कुमार[5]

लोंगन, मीठे एवं रसीले गूदे वाला एक विदेशी, उपोष्णकटिबंधीय, स्वादिष्ट फल है। औषधीय और स्वास्थ्य गुणों के कारण विभिन्न देशों में लोंगन के उत्पादन में विस्तार हुआ है। भारत में, यह बिहार, पश्चिम बंगाल, झारखंड, कर्नाटक एवं केरल में सीमित पैमाने पर उगाया जाता है और हाल ही के वर्षों में इसकी खेती ने बागवानों का ध्यान आकर्षित किया है। लोंगन के क्षेत्रफल एवं उत्पादन में वृद्धि से भारत में इस फल के और अधिक उपयोग की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।

लोंगन (*डिमोकार्पस लोंगन लौर*), जिसे चीन में 'ड्रैगन आई' या 'आई ऑफ डी ड्रैगन' एवं भारत के विभिन्न राज्यों जैसे झारखंड में 'कट लीची', पश्चिम बंगाल में 'आश फल' एवं दक्षिण भारत में 'लगून फ्रूट' के नाम से भी जाना जाता है।

लोंगन एक उपोष्णकटिबंधीय सदाबहार फल है जो लीची के कुल सेपींडेसी (सोपबेरी) से संबंधित है। यह एक द्विगुणित जीनोम ($2n = 2x = 30$) वाला फल है जिसकी उत्पत्ति दक्षिणी चीन से हुई है। दक्षिण पूर्व एशिया, दक्षिण एशिया, ऑस्ट्रेलिया और हवाई में लोंगन की व्यापक रूप से खेती की जाती है।

विश्व में चीन लोंगन का सबसे बड़ा उत्पादक देश है, जो विश्व के उत्पादन में 50% से अधिक योगदान देता है। कृषि संबंधी तकनीकों और फसल प्रबंधन के पहलुओं में सुधार के कारण हाल के दशकों में लोंगन का उत्पादन बढ़ा है। भारत में इसकी खेती बिहार, पश्चिम बंगाल, झारखंड, कर्नाटक एवं केरल में सीमित पैमाने पर की जाती है।

लोंगन के फल लीची के फल के समान ही होते हैं लेकिन आकार में छोटे, चिकने और पीले-भूरे से भूरे रंग के होते हैं। इसका खाने वाला भाग एरिल (अर्ध-पारभासी से सफेद रसीला गूदा) होता है जिसके चारों ओर एक पतली फलभित्ति होती है तथा जिसमें एक बड़ा गहरा भूरा बीज होता है। मीठे स्वाद के कारण उपभोक्ताओं द्वारा इसे व्यापक रूप से पसंद किया जाता है।

जलवायु एवं मृदा

लोंगन की खेती विश्व के उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र, जहां की जलवायु में नम एवं शुष्क अवधि अलग-अलग होती है तथा सर्दियों की अवधि कम होती है, में बढ़ रही है। सर्दियों में दो से तीन महीनों के दौरान 15-22 डिग्री सेल्सियस का तापमान, प्रचुर मात्रा में फूल आने के लिए अनुकूल होता है। पुष्पण एवं फलन के लिए 20-25 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त होता है। इसकी खेती के लिए कार्बनिक पदार्थों से भरपूर लाल दोमट मिट्टी अच्छी मानी जाती है।

स्वास्थ्यकारी लोंगन

मानव स्वास्थ्य पर इसके लाभदायक प्रभाव एवं अंतरराष्ट्रीय बाजार में बढ़ती माँग से इसकी लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसका सेवन ताजा फलों के अलावा कई प्रकार के प्रसंस्करित उत्पादों जैसे कि निर्जलीकृत गूदा (डीहाइड्रेटेड पल्प), लोंगन नट, जूस (रस), जेली (अवलेह) और मुरब्बा के रूप में किया जा सकता है। लोंगन एक पौष्टिक फल है, जिसमें कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, रेशे (फाइबर), वसा, विटामिन सी, अमीनो एसिड, खनिज, पॉलीफेनोल्स और वाष्पशील यौगिकों सहित कई प्रकार के पोषक और कार्यात्मक घटक होते हैं। प्राचीन काल से, मनुष्य में रोगों के प्रति प्रतिरक्षा को बढ़ाने और तंत्रिका दर्द एवं सूजन को कम करने के लिए लोंगन के फलों की फलभित्ति (पेरिकार्प) का उपयोग पारंपरिक चीनी दवाइयों के रूप में किया जाता रहा है।

लोंगन की विदेशी किस्मों के पौधे

[1]वैज्ञानिक (फल विज्ञान); [2]निदेशक; [4]वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी (फल विज्ञान); [5]यंग प्रोफेशनल भाकृअनुप-राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र, मुजफ्फरपुर (बिहार)-842002; [3]वैज्ञानिक (फल विज्ञान), भाकृअनुप का पूर्वी अनुसंधान परिषद, कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, रांची (झारखंड)-834010

गूटी विधि द्वारा प्रवर्धन

ऐसी गहरी उपजाऊ मृदा जिसका पीएच मान 5.5 से 6.0 हो तथा जिसमें जल निकास का उचित प्रबंधन हो, इसकी वृद्धि एवं विकास के लिए अच्छी होती है। भारत में, लोंगन उत्तर बिहार और पश्चिम बंगाल की जलोढ़ मिट्टी में अच्छी तरह से बढ़ता है और इसे झारखंड, छत्तीसगढ़ और अन्य लीची उगाने वाले क्षेत्रों में उगाया जा सकता है।

प्रवर्धन

लोंगन के व्यावसायिक प्रवर्धन के लिए गूटी (एयर लेयरिंग अथवा हवाई दाब) सर्वाधिक लोकप्रिय एवं प्रचलित विधि है। भारत में गूटी बांधने का सबसे उपयुक्त समय जून-जूलाई का महीना (मानसून की शुरुआत) होता है। गूटी से तैयार रूबी, पिंगपोंग, आल सीजन, वियतनाम एवं रेड मटोया नामक विदेशी किस्मों के पौधे पश्चिम बंगाल एवं दक्षिण भारत के निजी नर्सरी वालों द्वारा बेचे जाते हैं।

किस्में

वू युआन (ब्लैक राउंड), फुयान (आई ऑफ फॉर्च्यून अथवा लकी आई), डाव, चुलियांग और कोहाला, चीन और थाईलैंड में व्यावसायिक रूप से उगाई जाने वाली कुछ किस्में हैं। रूबी, पिंगपोंग, ऑल सीजन, वियतनाम एवं रेड मटोया किस्मों को दक्षिण भारत के राज्यों में लगाया जा रहा है। हाल ही में, भाकृअनुप-राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र, मुजफ्फरपुर (बिहार) द्वारा गंडकी उदय नामक एक किस्म विकसित की गई है। यह एक जल्दी से पकने वाली, नियमित फलन देने वाली, बौनी किस्म है जिसके फल बेहतर गुणवत्ता के होते हैं। इसके फल गोल या चपटे होते है जिनका वजन लगभग 11-13 ग्राम होता है। फलों में कुल घुलनशील ठोस पदार्थो की मात्रा 20-23 डिग्री ब्रिक्स तथा फलों में गूदा 69-73 प्रतिशत तक होता है।

वाई ट्रेलिस विधि से लोंगन की खेती

बाग स्थापना

मई-जून के महीने में 6-8 मीटर की दूरी पर 60×60×60 सें.मी. (लंबाई, चौड़ाई एवं गहराई) के गड्ढे खोदे जाते हैं। मानसून की पहली वर्षा होते ही गड्ढों की पुन: भराई की जाती है। गड्ढों को भरने के लिए उपयोग की जाने वाली मिट्टी में जैविक खाद और फॉस्फेट उर्वरक को शामिल किया जा सकता है। वर्षा ऋतु (जुलाई-अगस्त) में पोधों का रोपण किया जाता है। यदि रोपण सामग्री पॉलीबैग में लगाई गई हो तो रोपण के समय पॉलीबैग को हटा देना चाहिए। वृक्षों की स्थापना और वृद्धि की सुविधा के लिए युवा पौधों को नियमित रूप से सिंचित किया जाना चाहिए। वाई ट्रेलिस विधि में लोंगन को 4×4 मीटर की दूरी पर लगाया जा सकता है।

फलों की तुड़ाई

लोंगन में पुष्पण से लेकर फलों के पकने तक लगभग 5 महीने का समय लगता हैं। उत्तर भारत में मार्च-अप्रैल के महीने में पुष्पण होता है तथा जुलाई-अगस्त तक फल पककर तैयार हो जाते हैं।

लोंगन के फल नॉन-किलाईमेक्ट्रिक होते हैं अर्थात फल पेड़ पर ही पकते हैं। अत: फलों की तुड़ाई पूर्ण रूप से पकने पर ही की जाती है। लोंगन की परिपक्वता आमतौर पर फलों के रंग और स्वाद पर आधारित होती है। भारत में, लोंगन की तुड़ाई जुलाई-अगस्त के महीने में की जाती है। एक पूर्ण परिपक्व वृक्ष प्रति वर्ष 100-120 कि.ग्रा. उपज देता है।

कीट एवं रोग

वर्तमान में, भारत में लोंगन में कोई प्रमुख कीट और रोग की समस्या नहीं है।

संभावनाएं

लोंगन फल के उत्पादन में वृद्धि की संभावनाएं इसके उपयोग की उम्मीदें जगाती हैं। लोंगन फल में पाये जाने वाले पॉलीफेनोलिक यौगिकों का मानव स्वास्थ्य पर लाभकारी प्रभाव होने के कारण हाल ही में इसकी खेती ने बागवानों का ध्यान आकर्षित किया है। यह भारत के लिए एक नई फसल है एवं वर्तमान समय में भारत में इसकी खेती की अधिकांश सिफारिशें अन्य देशों में किए गए कार्यों पर आधारित हैं।

इस प्रकार, इस उभरते भावी फलों की खेती के लिए उत्पादन की प्रणाली विकसित करने की आवश्यकता है। बिहार, पश्चिम बंगाल और झारखंड में लोंगन की खेती के विस्तार की अच्छी संभावना है। प्रसंस्करित उत्पादों के लंबे समय तक विस्तार और प्रचार पर शोध पर अधिक जोर देने की आवश्यकता है।

मूल्य संवर्धन

लोंगन के फलों की भंडारण क्षमता अर्थात शेल्फ लाइफ कम होती है, अत: इन्हें अधिक समय तक नहीं रखा जा सकता। सामान्य तापमान (25°-31° से.) पर लोंगन के फलों का छिलका 3-4 दिनों के भीतर भूरे रंग का हो जाता है, और एक सप्ताह के भीतर एरिल (गूदा) सड़ जाता है और अपना व्यावसायिक मूल्य खो देता है। लोंगन के फलों से बड़ी संख्या में उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं। सूखे लोंगन फल, जिन्हें 'नट्स' कहा जाता है, एशिया में लोकप्रिय हैं। लोंगन मे कुल घुलनशील ठोस पदार्थों (मिठास) की मात्रा अधिक होती है। इससे लोंगन के फलों को रस में भी डिब्बाबंद किया जा सकता है।

मूल्यवर्धित उत्पाद (निर्जलीकृत गूदा, लोंगन नट एवं शहद)

नीबूवर्गीय फलों की नवीनतम किस्में

मुकेश शिवरान, निमिषा शर्मा, राधा मोहन शर्मा और **अनिल कुमार दुबे**

नीबूवर्गीय फल उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय फलों में प्रमुख स्थान रखते हैं। नीबूवर्गीय फलों में वर्ष 1980 के दशक के मध्य से तेजी से विस्तार के साथ विश्व में इनके उत्पादन और खपत में भारी वृद्धि देखी गई है। प्रति व्यक्ति खपत बढ़ने के साथ-साथ विभिन्न नीबूवर्गीय प्रजातियों में मीठा नारंगी और नीबू भारत में सबसे महत्वपूर्ण एवं लोकप्रिय हैं। इनकी खेती देश के लगभग सभी कृषि जलवायु क्षेत्रों में की जाती है। भारत में नीबूवर्गीय फलों के उत्पादन के लिए कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जिसमें जलवायु परिवर्तन, नए कीटों एवं रोगों का प्रकोप, भूमि की बढ़ती कीमतें और अंतर्राष्ट्रीय बाजार प्रतिस्पर्धा शामिल हैं। हमारे देश में नीबूवर्गीय फलों की उत्पादकता अन्य देशों की तुलना में कम है। इसलिए आधुनिक नीबूवर्गीय फलों में, उच्च फल गुणवत्ता वाली अत्यधिक अपनाने योग्य किस्मों का विकास आज की आवश्यकता है। इस स्थिति को समझते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के वैज्ञानिकों ने कई नीबूवर्गीय फलों की किस्मों का विकास किया है।

नीबू की विभिन्न किस्मों का वर्णन इस प्रकार है:-

मीठा नारंगी

पूसा राउंड: यह किस्म क्लोनल चयन विधि से विकसित हुई है। यह भारत सरकार द्वारा वर्ष 2021 में दिल्ली, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान एवं जम्मू-कश्मीर के मैदानी क्षेत्रों में उगाने के लिए विमोचित की गई है। यह घने पत्ते और आकर्षक गोल फल वाली एक सशक्त किस्म है। इसमें मध्यम अम्लीयता (0.92 प्रतिशत) के साथ एक समान बड़े आकार के फल (268.68 ग्राम), अधिक रस (119.00 मिली/फल; 48.26 प्रतिशत) और अधिक

फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग,
भाकृअनुप-भाकृअनु संस्थान, नई दिल्ली

पूसा राउंड

घुलनशील ठोस (10.14° ब्रिक्स) पदार्थ होते हैं। इसके अलावा, पौधे मध्यम रूप से ओजस्वी होते हैं, और लगभग 400 पौधों को एक हैक्टर (5 मीटर × 5 मीटर) में लगाया जा सकता है। इस किस्म की औसत उपज 14-18 टन हैक्टर होती है। प्रति पौधे के आधार पर, यह जाफा किस्म की तुलना में लगभग 3.5 गुना अधिक और वालेंसिया किस्म की तुलना में 2.4 गुना अधिक उपज देती है। इसलिए, यह किस्म प्रति इकाई क्षेत्र में उच्च उत्पादकता देती है। इसके फल कणिकायन विकार रहित होते हैं।

पूसा शरद: यह किस्म वर्ष 2021 में दिल्ली सरकार द्वारा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के लिए विमोचित की गयी है, लेकिन इसको उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों के साथ निचले पहाड़ी क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। यह एक ऐसा चयन है जिसमें मध्यम ओजस्वी पौधे होते हैं, जिसमें पत्तियां एकतरफा, पेटीओल विंग अनुपस्थित, कांटेदार, घना चंदवा एवं इसके पौधे 5×5 मीटर की दूरी पर रोपण के लिए उपयुक्त होते हैं।

इस किस्म के फल बड़े (227.56 ग्राम), गोल आकार, रस की मात्रा 50.12 प्रतिशत, मध्यम मोटा छिलका, अधिक कुल घुलनशील ठोस (9.20° ब्रिक्स) और मध्यम अम्लीयता (0.77 प्रतिशत) होती है। इस किस्म की औसत उपज 12-16 टन हैक्टर होती है। यह जाफा किस्म से 2.6 गुना अधिक तथा वालेंसिया किस्म से 1.8 गुना अधिक उपज देती है। इसलिए, यह प्रति इकाई क्षेत्र में उच्च उत्पादकता देती है। इसके फल कणिकायन विकार रहित होते हैं।

पूसा शरद

खट्टा नीबू

पूसा अभिनव: यह एक क्लोनल चयन है। यह किस्म भारत सरकार द्वारा वर्ष 2021 में दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार, उत्तराखंड, मध्यप्रदेश, हरियाणा, पंजाब एवं राजस्थान के लिये विमोचित की गई है। इसमें मध्यम ओजस्वी पौधे, घने पत्ते और आकर्षक

चमकीले पीले गोल आकार के फल होते हैं। यह फल गर्मियों के महीनों (मार्च-अप्रैल और अगस्त-सितंबर) के दौरान मुख्य तुड़ाई के साथ वर्ष भर फलता-फूलता है और नीबू के कैंकर रोग के लिए मध्यम संवेदनशील होता है। इसमें मध्यम आकार के फल (38.15 ग्राम), रस की मात्रा (56.92 प्रतिशत) और अम्लीयता (7.72 प्रतिशत) अधिक होती है। दो मौसमों में तुड़ाई के साथ वर्षभर फलने से यह किस्म व्यावसायिक खेती के साथ-साथ किचन गार्डन के लिये अत्यधिक उपयुक्त है। इस किस्म की औसत उपज 16-20 टन हैक्टर होती है।

पूसा अभिनव

चकोतरा

पूसा अरुण: यह नई बीज रहित और अत्यधिक रसदार चकोतरा की किस्म है। यह एक प्राकृतिक उत्परिवर्ती किस्म है जिसमें उपज और गुणवत्ता में विशिष्ट लाभ होता है। यह किस्म दिल्ली सरकार द्वारा वर्ष 2021 में राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के लिये विमोचित की गई है। इसके अतिरिक्त इसे उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसमें अधिक उपज (34.30 किग्रा/पौधा), किस्म के फलों का औसत वजन 500-600 ग्राम और रस की मात्रा 40-45 प्रतिशत होती है। यह मीठे संतरे, ग्रेपफ्रूट और चकोतरा की अन्य खट्टी मीठी किस्मों की तुलना में 20 दिनों पहले परिपक्व हो जाती है।

कम अम्लीयता (0.4 प्रतिशत साइट्रिक एसिड), अधिक कुल घुलनशील ठोस (12° ब्रिक्स) और विटामिन-सी (50-55 मिलीग्राम/100 मिलीलीटर रस) होने के साथ फलों की गुणवत्ता में भी उत्कृष्ट है। पौधे मध्यम ओजस्वी होते हैं, इसलिए उच्च घनत्व वाली बागवानी के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।

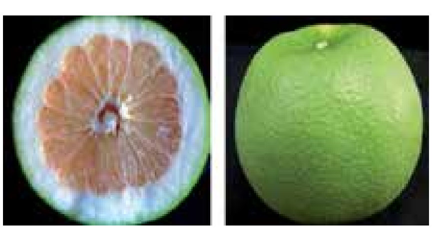

पूसा अरुण

पूसा उदित

यह एक क्लोनल चयन है जो वर्ष 2021 में दिल्ली सरकार द्वारा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के लिए विमोचित की गई है। इसके अतिरिक्त इसे उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इस किस्म के फल गोल एवं मध्यम आकार (37.9 ग्राम), फल की लंबाई (43.9 मिमी.), व्यास (39.3 मिमी.), छिलके की मोटाई (1.1 मिमी.), बीज (8.3/फल), पकने पर फल चमकीले पीले, रस की मात्रा (43.3 प्रतिशत), कुल घुलनशील ठोस (8.5° ब्रिक्स), अम्लीयता (6.9 प्रतिशत) होती है। यह अगस्त-सितंबर और फरवरी-मार्च से मुख्य तुड़ाई के साथ वर्षभर फलन देती है। यह नीबू के कैंकर रोग के लिए मध्यम रूप से संवेदनशील है। दो मौसमों की तुड़ाई के साथ वर्षभर फलने से यह किस्म व्यावसायिक खेती के साथ-साथ किचन गार्डन के लिये अत्यधिक उपयुक्त है। इस किस्म की औसत उपज 16-20 टन हैक्टर होती है।

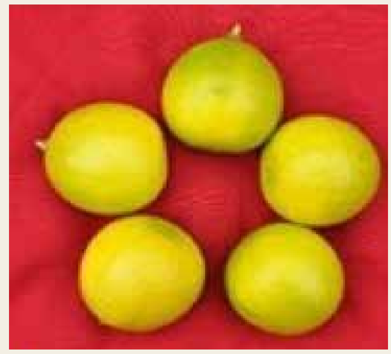

पूसा उदित

कागजी कलान

इसे 4 मीटर × 4 मीटर की दूरी पर लगाया जा सकता है। इस किस्म की औसत उपज 18-20 टन हैक्टर होती है।

नीबू

कागजी कलान: यह किस्म उत्तर भारतीय परिस्थितियों के लिए अधिक अनुकूल है। इसका पौधा लगातार फलता-फूलता है और रोपण के तीन वर्षों बाद फल देने लगता है। इसके फल आयताकार या गोलाकार, छिलके पीले, चिकने, पतले, बीजरहित, गूदा हरा-पीला, रसदार, मध्यम अम्लीय होता है। फल अक्सर बड़े टर्मिनल समूहों में विकसित होते हैं।

पूसा लेमन-1: यह किस्म क्लोनल चयन द्वारा विकसित की गई है। इसका विमोचन वर्ष 2021 में दिल्ली सरकार द्वारा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के लिये किया गया है। पूसा लेमन-1 को पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसके फल बड़े (67.42 ग्राम) व अधिक रसयुक्त (42.88 प्रतिशत) होते हैं। इसकी तुड़ाई जून के माह से आरम्भ होती है। यह किस्म वर्ष में दो बार फल देती हैं तथा इस किस्म की औसत उपज 12-14 टन हैक्टर होती हैं।

उत्पादन तकनीक: इनकी पोषक तत्वों की मांग, पादप सुरक्षा इन समूहों में उपलब्ध दूसरी किस्मों जैसी है। अत: उपरोक्त सभी किस्मों की प्रचलित उत्पादन आधुनिक तकनीक से बागवानी की जा सकती है। ■

पौष्टिक

गुणों से भरपूर ककोड़ा

महेश चौधरी[1]**, अनोप कुमारी**[2] और **प्रकाश महला**[3]

वर्तमान में जहां भरपूर मात्रा में खाद्य उत्पाद उपलब्ध हैं, वहीं कुपोषण जैसी समस्यायें भी देखने को मिल जाती हैं। भागदौड़ भरी जिंदगी में शरीर को स्वस्थ रखने के लिए पोषक तत्त्वों सें युक्त सब्जी का सेवन करना जरूरी है। ऐसे में उपभोक्ता पोषण और औषधीय गुणों से समृद्ध रसायनमुक्त सब्जी अधिक मूल्य देकर भी खरीदने को तैयार रहते हैं। इन्हीं खासियत सें जुड़ी एक सब्जी है ककोड़ा, जिसका वानस्पतिक नाम *मोमोर्डिका डायोका एल.* है एवं यह करेला प्रजाति कुकुरबिटेसी का सदस्य है। देखने में यह करेला जैसा ही है, लेकिन आकार में उससे छोटा होता है। विभिन्न जगहों पर इसे कई अन्य नामों जैसे वन करेला, कंटोला, चठैल, मीठा करेला, ककरोल, भर करेला इत्यादि से जाना जाता है। अंग्रेजी में इसे स्पाइनी गॉर्ड या टीजल गॉर्ड कहा जाता है। इसके कच्चे फलों सें सब्जी तैयार की जाती है जो स्वादिष्ट होने के साथ ही स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद होती है।

ककोड़ा के पौधे प्राय: खाली जगह, खेत की मेड़, जंगली स्थान इत्यादि में बरसात के मौसम में स्वत: ही उग आते हैं। ककोड़ा का पौधा लगभग 3 से 5 मीटर लम्बा, बहुवर्षीय, एकालिंगाश्रायी (जिसमें नर एवं मादा पुष्प अलग-अलग पौधे पर आते हों) लतावर्गीय होता है। इसकी बेल सर्दी व गर्मी के मौसम में सुषुप्तावस्था में रहती है एवं जैसे ही बारिश का दौर प्रारंभ होता है स्वत: ही उगकर फलोत्पादन देने लग जाती है।

पौधों पर पीले रंग के फूल आते हैं, जिनसें हरे रंग के फल प्राप्त होते हैं। फल

ककोड़ा से तैयार सब्जी

मध्यम आकार के (20-40 ग्राम), जिनका व्यास लगभग 2-3 सें.मी., अंडाकार आकृति में जिन पर कॉंटेदार (स्पाइनी) संरचना होती है। फल पकने पर हरे से नारंगी और लाल रंग के गूदे में परिवर्तित हो जाते हैं।

पोषण महत्त्व

आयुर्वेद में ककोड़ा को एक औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। फलों में मौजूद पोषक तत्व एवं मान सारणी में दर्शाया गए हैं।

सारणी: ककोड़ा में पाये जाने वाले पोषक तत्त्व

क्र.सं.	तत्वों का नाम	पोषण मान
1.	नमी (प्रतिशत)	84.1
2.	कार्बोहाइड्रेट (प्रतिशत)	47.92
3.	रेशा (प्रतिशत)	21.3
4.	कैल्शियम (मिली ग्राम)	33
5.	प्रोटीन (प्रतिशत)	19.38
6.	वसा (प्रतिशत)	3.1
7.	फॉस्फोरस (मिली ग्राम)	42
8.	आयरन (मिली ग्राम)	4.6
9.	पोटेशियम (मिली ग्राम)	8.25
10.	सोडियम (मिली ग्राम)	1.51
11.	ऊर्जा (कि.ग्रा. कैलोरी/100 ग्राम मे)	311.50
12.	एस्कॉर्बिक अम्ल (मिली ग्राम)	275.1
13.	नियासिन (मिली ग्राम)	0.59
14.	राइबोफ्लेविन (मिली ग्राम)	0.18
15.	थायमीन (माइक्रोग्राम)	176.1
17.	कैरोटीन (आई.यू.)	2700

बुआई का समय व तरीका

इसका प्रवर्धन बीज, कंद या जड़ कलम द्वारा कर सकते हैं। बीज द्वारा पौधे तैयार होने में अधिक समय लगता है। साथ ही नर एवं मादा पौधे की पहचान करना भी कठिन होता है। अधिक उत्पादन हेतु 10 प्रतिशत नर पौधे भी आवश्यक हैं जो परागण में सहायक होते हैं। कंद अथवा कलम द्वारा रोपण करने हेतु नर व मादा पौधों को चिन्हित करके फरवरी-मार्च में खेत में लगा सकते हैं। 5-6 सें.मी. लंबाई की कलमों का रोपण खेत में कतार सें कतार की दूरी 3 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 2 मीटर रखते हुए कर देते हैं।

फलों की तुड़ाई, उपज एवं भंडारण

सामान्यत: बुआई के 75-80 दिनों बाद फल तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। इस समय फल मुलायम, हरी अवस्था में एवं बीज नरम होने

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, अरनियां-श्रीमाधोपुर, सीकर, 332 603 (श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर-राजस्थान); [2]कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर, 341 506-नागौर (कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान); [3]क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, अबोहर (पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना, पंजाब)

सड़क किनारे बिक्री के लिए रखे फल

लाभकारी ककोड़ा

- **आंखों के लिए लाभदायक:** इसके फलों में विटामिन 'ए' प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जो आंखों की रोशनी बढ़ाने में सहायक होता है।
- **पाचन तंत्र में सुधार:** फलों में रेशा मौजूद होता है जो पाचन तंत्र को उत्तेजित करता है। कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन व नमी की मात्रा अधिक होने के कारण खाना पचाने में आसानी होती है।
- **मधुमेह:** इसमें मौजूद फाइटो-पोषक तत्व, पॉलीपेप्टाइड-पी व पादप हाइपोग्लाइसीमिया घटक शरीर में मौजूद अतिरिक्त शर्करा के स्तर को कम करने में मदद करते हैं।
- **कैंसररोधी गुण:** शरीर में अत्यधिक विषाक्त मुक्त कणों की मौजूदगी कैंसर के मुख्य कारणों में से एक है। इसमें मौजूद विटामिन-सी कैंसर से लड़ने में सहायक होता है।
- **पथरी एवं बवासीर में उपयोगी:** यह बवासीर एवं पथरी जैसी समस्याओं से मुक्ति दिलाने में भी सहायक होता है। 5 ग्राम ककोड़ा पाउडर एवं 5 ग्राम चीनी का मिश्रण दिन में दो बार प्रयोग करने से बवासीर को ठीक किया जा सकता है।
- **बुखार व क्षय में:** ककोड़ा की पत्तियों को पानी में उबाल लिया जाता है। उसके बाद उबले पानी में एक बड़ा चम्मच शहद का डालकर पीने से क्षय रोग से राहत मिलती है।
- **खाँसी से निजात:** 3 ग्राम पाउडर दिन में तीन बार पानी के साथ प्रयोग करने से खाँसी से निजात पायी जा सकती है।
- **वजन में कमी:** इसमें पानी की मात्रा अधिक होती है, जो वजन कम करने में सहायक है।
- **रक्तचाप को नियंत्रित करें:** अधिक रेशा होने से यह रक्तचाप की समस्या को दूर करता है, साथ ही यह हृदय संबंधित रोगों से भी बचाव करता है।
- **रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में:** इसमें मौजूद विटामिन-सी रोग प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाता है। विटामिन 'सी' शरीर में श्वेत रक्त कोशिकाएं बढ़ाने में योगदान देता है। ये श्वेत रक्त कोशिकाएं शरीर को संक्रमण एवं वायरस से बचाती हैं।

किस्में

ककोड़ा पौष्टिक एवं औषधीय गुणों से भरपूर होने के साथ ही आर्थिक दृष्टिकोण से भी महत्त्वपूर्ण है। इसकी कुछ महत्त्वपूर्ण किस्में निम्न हैं:-

- **अर्का नीलांचल शांति:** यह किस्म भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु के केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र, भुबनेश्वर द्वारा विकसित की गई है। फल मध्यम आकार के (30-45 ग्राम) एवं औसत उपज 5-7 किलोग्राम प्रति पौधा प्राप्त की जा सकती है।
- **अर्का नीलांचल श्री:** यह अधिक उपज देने वाली किस्म है। इसके फल दिखने में आकर्षक व बीज मुलायम होते हैं जिससे फलों की बाजार मांग अधिक होती है।
- **इंदिरा ककोड़ा-1:** यह किस्म इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर द्वारा विकसित की गई है। यह कीट एवं रोगों से प्रतिरोधी है। फल गहरे हरे रंग के होते हैं, जिनका औसत भार 14 ग्राम एव बीज द्वारा बुआई करने पर फलों की तुड़ाई 75-80 दिनों बाद की जा सकती है।

चाहिए। फलों की तुड़ाई 3-4 दिनों के अंतराल पर हाथ द्वारा करते हैं। पूर्ण पके फल हरे से नारंगी और लाल रंग के गूदे में परिवर्तित हो जाते हैं। परिपक्व फलों का उपयोग बीज निकालने के लिए कर सकते हैं।

ककोड़ा की बेल पर खिले फूल

ककोड़ा की उपज उगाई जाने वाली किस्म, मौसम, सस्य क्रियाओं के प्रबंधन पर निर्भर करती है। औसतन 75-100 क्विंटल फल प्रति हैक्टर प्राप्त हो जाते हैं। फलों को तुड़ाई के पश्चात 3-4 दिनों तक ताजा रखा जा सकता है, जबकि शीतगृह में 10 दिनों तक सुरक्षित रख सकते हैं। ■

सौंदर्य एवं गुणों से भरपूर अपराजिता

शिवानी, अनिल कुमार सिंह, अंजना सिसोदिया, विनीता सिंह और **मनदीप सिंह**

प्रकृति ने हमें ऐसे अनेक उपहार दिए हैं, जो हमारे जीवन को सुंदर और स्वस्थ बनाते हैं। इन्हीं उपहारों में से एक है अपराजिता, जिसे संस्कृत में "अपराजेय" कहा जाता है। यह पौधा न केवल अपने आकर्षक नीले या सफेद फूलों के लिए जाना जाता है, बल्कि इसके औषधीय गुण इसे सेहत के लिए भी बेहद उपयोगी बनाते हैं। आयुर्वेद और आधुनिक विज्ञान दोनों में अपराजिता को एक अमूल्य औषधि के रूप में स्वीकार किया गया है। अपराजिता का वैज्ञानिक नाम *क्लिटोरिया टर्नेटिया* है। इसे आम बोलचाल में शंखपुष्पी, बटरफ्लाई पी, खगिन, नीलोफर या ब्लू पी फ्लावर के नाम से भी जाना जाता है। यह मुख्यत: एक बेल के रूप में उगता है, जो दीवारों और जालियों पर चढ़ते हुए अपनी खूबसूरती से बगीचे की शोभा बढ़ाता है। इसमें एक सीधा, बेलनाकार एवं कठोर आधारिक तना होता है। यह पौधा कुछ हद तक अम्लीय और क्षारीय स्थितियों को सहन कर सकता है। इसमें कुछ जैवसक्रिय यौगिक (बायोएक्टिव कंपाउंड) जैसे फ्लेवोनॉयड्स, एल्कलॉइड्स और एंथोसाइनिन्स पाए जाते हैं, जो इसे औषधीय गुणवत्ता प्रदान करते हैं।

अपराजिता का फूल अपनी अनोखी सुंदरता और आकर्षक रंग के कारण सौंदर्य का प्रतीक माना जाता है। इसका गहरा नीला, सफेद या हल्का बैंगनी रंग किसी भी उद्यान को जीवंत और मनमोहक बना देता है। इसके फूलों का अनूठा आकार और उनकी कोमलता प्रकृति की अद्वितीय रचना का उदाहरण है और उद्यान को एक अलग पहचान देता है।

अपराजिता न केवल अपनी सुंदरता से मन को शांति प्रदान करता है, बल्कि यह पर्यावरण को भी शुद्ध करने में सहायक है। इसे घरों, कार्यालयों और सार्वजनिक स्थलों पर सजावट के लिए विशेष रूप से लगाया जाता है। यह पौधा कम देखभाल में भी अपनी हरियाली और फूलों की महिमा बनाए रखता है, जिससे यह प्राकृतिक सुंदरता का एक उत्कृष्ट उदाहरण बन जाता है। तेज बढ़ने की क्षमता और कम मेहनत में हरियाली प्रदान करने के गुण इसे उद्यान के लिए उपयुक्त बनाते हैं।

अपराजिता के पुष्पों की माला

अपराजिता के चमकदार, आकर्षक नीले फूल त्योहारों, शादियों और विशेष अवसरों पर गहनों के रूप में इस्तेमाल करने के लिए इसे एक आकर्षक विकल्प बनाते हैं। इनके पुष्प से बने हार अक्सर सजावटी प्रदर्शनों में, पूजा स्थलों पर या धार्मिक आयोजनों के दौरान मूर्तियों को सजाने के लिए उपयोग किए जाते हैं।

स्वास्थ्य लाभ

रोगाणुरोधी गतिविधि: अपराजिता में रोगाणुरोधी गुण होते हैं, जो रोगों के लिए जिम्मेदार बैक्टीरिया और कवक को नष्ट करने में सहायक हैं। इनके बीजों से प्राप्त फिनोटिन प्रोटीन माइक्रोकोकस लुट्यिस बैक्टीरिया (जो त्वचा संक्रमण, मूत्र मार्ग संक्रमण और स्यूडो-सेप्सिस का कारक है) और कैंडिडा फंगस (जो मौखिक संक्रमण का कारक है) पर प्रभावी है। यह राइजोपस और अल्टरनेरिया जैसे कवक के विरुद्ध भी कारगर है।

उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी

त्रिपुरा के आदिवासी जन समूह अपराजिता की पत्तियों और जड़ों का उपयोग मूत्र मार्ग संक्रमण के उपचार में करते हैं।

अपराजिता की पत्तियों का अर्क *एसपरजिलस नाइगर* कवक (जो एस्परजिलोसिस और ऑटोमाइकोसिस का कारक है) के विकास को रोकता है। इसके फूलों की पंखुड़ियों में मौजूद एंथोसाइनिन्स में एंटीबैक्टीरियल गुण होते हैं, जिसके कारण इनका उपयोग नेत्र रोगों में आंखों के ड्रॉप्स बनाने में किया जाता है। इसके बीज और जड़ों में मौजूद साइक्लोटाइड्स शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक हैं।

एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि: अपराजिता में फ्लेवोनॉयड्स मौजूद होते हैं, जो शरीर की कोशिकाओं को फ्री रेडिकल्स से होने वाले नुकसान से बचाते हैं। यह गुण पुराने रोगों के उपचार में मदद करता है। थाईलैंड में अपराजिता की पत्तियों का अर्क कॉस्मेटिक उत्पादों में उपयोग किया जाता है, क्योंकि यह त्वचा को निखारने और उम्र बढ़ने के प्रभाव को कम करने में सहायक होता है।

मस्तिष्क और स्मृति को बढ़ाए

अपराजिता का उपयोग स्मृति और मस्तिष्क कार्यों को सुधारने में सहायक माना जाता है। "मेधा रसायन" (अपराजिता के पूरे पौधे और गुड़ से बना एक 1:1 अनुपात का मिश्रण) मस्तिष्क की कोशिकाओं को तनावजनित क्षति से बचाता है। यह मस्तिष्क की क्षमता को बढ़ाकर स्मृति, एकाग्रता और मानसिक स्पष्टता में सुधार करता है। इस प्रकार, अपराजिता मानसिक स्वास्थ्य के लिए एक प्रभावी उपाय है।

सूजन प्रतिरोधी: अपराजिता की जड़ों से प्राप्त मेथनॉल अर्क में सूजनरोधी और बुखाररोधी गुण होते हैं। इसके फूलों के एथेनॉल अर्क में एंटी-एलर्जिक गतिविधियां पाई जाती हैं, जो अस्थमा और अन्य एलर्जी समस्याओं में राहत प्रदान करती हैं। यह

अपराजिता फूलों से बनी ब्लू टी

अपराजिता की आकर्षक बेल

अर्क शरीर में सूजन को नियंत्रित करने के साथ-साथ शारीरिक असुविधा को भी कम करने में प्रभावी होते हैं।

उद्विग्नता और अवसाद विरोधी: अपराजिता की जड़ के अर्क में (जेड)-9,17-ऑक्टाडेकाडायनल और एन-हेक्साडेकानोइक अम्ल जैसे यौगिक होते हैं, जो अवसाद और उद्विग्नता के उपचार में सहायक हैं। "मेधा रसायन" का उपयोग न्यूरोलॉजिकल विकारों, जैसे मानसिक तनाव और अवसाद के उपचार में किया जाता है। यह मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद करता है, जिससे उद्विग्नता और अवसाद से राहत मिलती है और मानसिक शांति प्राप्त होती है।

दर्द निवारक: अपराजिता की पत्तियों के मेथनॉल अर्क में दर्द निवारक गुण पाए जाते हैं, जो शरीर में दर्द को कम करने में सहायक होते हैं। यह अर्क एक प्राकृतिक दर्द निवारक दवा के रूप में काम करता है, जिससे सूजन और दर्द में राहत मिलती है और शारीरिक असुविधा में कमी आती है।

पाचन स्वास्थ्य: अपराजिता की पत्तियों का अर्क पाचन प्रक्रिया को सुधारने में सहायक होता है। यह पेट की समस्याओं, जैसे कब्ज और अपच को दूर करने में सहायक है। इसके सेवन से आंतों की कार्यक्षमता बेहतर होती है और पाचन तंत्र स्वस्थ रहता है।

कैंसर रोधी गुण: अपराजिता के बीजों और पंखुड़ियों में लिनोलेइक और फाइटामिक अम्ल जैसे यौगिक पाए जाते हैं, जो कैंसर कोशिकाओं की जीवन क्षमता को कम करने में मदद करते हैं। HEp-2 मानव कार्सिनोमा कोशिकाओं पर शोध में यह पाया गया है कि ये यौगिक कैंसर कोशिकाओं के विकास को रोकने में सहायक होते हैं, जिससे कैंसर के प्रभावी इलाज में अपराजिता एक संभावित सहायक बन सकता है।

मधुमेह रोधी

अपराजिता के फूलों के अर्क में मौजूद खनिज और विटामिन, रक्त में शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करते हैं। यह इंसुलिन सेंसिटिविटी को सुधारते हैं, जिससे मधुमेह के रोगियों के लिए यह एक प्रभावी प्राकृतिक उपचार साबित हो सकता है।

रक्तचाप नियंत्रण: अपराजिता के फूलों से बनी "ब्लू टी" रक्तचाप को नियंत्रित करने में सहायक है। यह उच्च रक्तचाप (हाइपरटेंशन) को रोकने और सामान्य रक्तचाप बनाए रखने में मदद करती है। इसके नियमित सेवन से रक्तवाहिकाओं को आराम मिलता है और रक्त प्रवाह में सुधार होता है।

गुणकारी अपराजिता

अपराजिता, (क्लिटोरिया टर्नेटिया) एक बहुपयोगी और सुंदर पौधा है। इसके आकर्षक फूल न केवल बगीचों की शोभा बढ़ाते हैं, बल्कि इसके औषधीय गुण इसे विशेष बनाते हैं। अपराजिता में रोगाणुरोधी, सूजनरोधी, एंटीऑक्सीडेंट, मधुमेह रोधी और मस्तिष्क कार्यों को सुधारने वाले गुण पाए जाते हैं।

यह पौधा प्राकृतिक उपचार के क्षेत्र में अत्यधिक उपयोगी है और इसे पारंपरिक चिकित्सा में व्यापक रूप से अपनाया गया है। इसके साथ ही, इसकी सरल देखभाल और सजावटी उपयोग इसे घर, कार्यालय और सार्वजनिक स्थलों के लिए उपयुक्त बनाते हैं। अपराजिता न केवल पर्यावरण के लिए फायदेमंद है, बल्कि शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए भी अत्यधिक लाभकारी है। यह पौधा प्रकृति का एक अद्भुत उपहार है, जिसे हमें सहेजकर रखना चाहिए। ■

फायदेमंद है तेन्दू फल

तनिष्का चौधरी और **योगेश कुमार**

तेन्दू एक महत्वपूर्ण जंगली फल है, जो पोषण तत्वों से भरपूर होता है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में विशेष योगदान देता है। इसमें प्रचुर मात्रा में विटामिन, खनिज और एंटीऑक्सीडेंट पाए जाते हैं, जो इसे स्वास्थ्य के लिए लाभकारी बनाते हैं। पारंपरिक रूप से इसका उपयोग औषधीय, खाद्य और औद्योगिक क्षेत्रों में किया जाता रहा है। तेन्दू फल के प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन की संभावनाएँ भी अत्यधिक हैं, जिससे यह किसानों और वन क्षेत्र में रहने वाले समुदायों के लिए आर्थिक रूप से उपयोगी सिद्ध हो सकता है। इस लेख में तेन्दू फल के पोषण मूल्य, उपयोग और संभावनाओं पर चर्चा की गई है।

भारत में अनेक प्रकार के जंगली फल पाए जाते हैं, जो न केवल पोषण से भरपूर होते हैं बल्कि औषधीय गुणों से भी युक्त होते हैं। इन्हीं में से एक महत्वपूर्ण फल है तेन्दू। यह एक कम प्रचलित फल है, जिसे विभिन्न राज्यों में अलग-अलग नामों से जाना जाता है, जैसे कि उत्तर प्रदेश में तेन्दू, ओडिशा, झारखंड और पश्चिम बंगाल में केन्दू, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में तेम्बुरिनी, तमिलनाडु में कराई, केरल में कारी, गुजरात में तेम्बरू तथा तेलुगु में अबनस। अंग्रेजी में इसे 'ईस्ट इंडियन एबनी' या 'कोरोमंडल एबनी' कहा जाता है। इस वृक्ष का वानस्पतिक नाम यूनानी शब्द "डिओस" (दिव्य) और "पाइरस" (फल) से लिया गया है।

तेन्दू फल मुख्य रूप से गर्मियों (मई-जून) में उपलब्ध होता है और अपने मीठे स्वाद के कारण स्थानीय बाजारों में बेचा जाता है। यह न केवल पारंपरिक रूप से खाया जाता है, बल्कि औषधीय और आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

वानस्पतिक विवरण

तेन्दू एक मध्यम आकार का वृक्ष है, जो 25 मीटर तक ऊँचा हो सकता है। यह वृक्ष विभिन्न जलवायु परिस्थितियों में पाया जाता है, जहाँ नमी वाले क्षेत्रों में यह सदाबहार रहता है, जबकि सूखे क्षेत्रों में यह पर्णपाती हो जाता है। इसके पत्ते मोटे और चमड़े जैसे होते हैं, जिनकी लंबाई 35 सें.मी. तक हो सकती है। फूल फरवरी से अप्रैल के बीच खिलते हैं और फल मई-जून में पकते हैं।

फल गोल, हरे रंग के होते हैं, जो पकने पर पीले-भूरे रंग में बदल जाते हैं। प्रत्येक फल में 1 से 4 बीज होते हैं, जिनका बाहरी भाग कठोर और चिकना होता है। फल का गूदा नरम और मीठा होता है, जिसका वजन 6-7 ग्राम तक हो सकता है।

उपयोग

तेन्दू वृक्ष के विभिन्न भागों का उपयोग अलग-अलग उद्देश्यों के लिए किया जाता है:

कृषि प्रसंस्करण और खाद्य इंजीनियरिंग विभाग, स्वामी विवेकानंद कृषि अभियांत्रिकी और प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छत्तीसगढ़)

पोषण संरचना एवं स्वास्थ्य लाभ

तेन्दू फल पोषण तत्वों से भरपूर है और इसमें कई आवश्यक खनिज एवं विटामिन मौजूद होते हैं:

- **कार्बोहाइड्रेट:** 31 ग्राम प्रति 58 ग्राम फल।
- **फाइबर:** पाचन स्वास्थ्य के लिए लाभकारी।
- **विटामिन:** विटामिन ए, सी और एंटीऑक्सीडेंट्स से भरपूर।
- **खनिज:** फॉस्फोरस और कैल्शियम की पर्याप्त मात्रा।
- **टैनिन यौगिक:** आँतों की सेहत में सहायक, दस्त को नियंत्रित करने में मददगार।
- **स्वास्थ्यकारी:** यह फल कम कैलोरी वाला होता है और वजन कम करने वालों के लिए एक अच्छा विकल्प है। इसमें कैटेचिन और पॉलीफेनॉल एंटीऑक्सीडेंट भी होते हैं, जो शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने और सूजन कम करने में सहायक होते हैं।

पोषण से समृद्ध फल

- **फल:** इसे कच्चा या पकाकर खाया जाता है। इसे जैम, सिरप और सुखाकर पाउडर के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है।
- **पत्ते:** भारत में इसके पत्ते बीड़ी उद्योग में तंबाकू लपेटने के लिए उपयोग होते हैं।
- **लकड़ी:** फर्नीचर, वाद्ययंत्र और अन्य टिकाऊ उत्पाद बनाने के लिए प्रयोग की जाती है।
- **छाल और पत्तियाँ:** इनमें औषधीय गुण होते हैं और इन्हें आयुर्वेदिक उपचारों में प्रयोग किया जाता है।

तेन्दू फल का गूदा

तेन्दू फल की गिरी

तेन्दू की छाल एंटीहाइपरग्लाइसेमिक (मधुमेह-नियंत्रक) गुणों से युक्त होती है, जबकि इसकी पत्तियों में एंटीबैक्टीरियल और एंटीमाइक्रोबियल तत्व पाए जाते हैं।

आर्थिक महत्व और प्रसंस्करण संभावनाएँ

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में तेन्दू वृक्ष का विशेष योगदान है, विशेष रूप से इसके पत्ते बीड़ी निर्माण उद्योग में महत्वपूर्ण होते हैं। हालांकि, इसके फल का व्यावसायिक रूप से कम उपयोग किया जाता है।

कटाई, भंडारण और संरक्षण

- तेन्दू फल गैर-क्लाइमेक्टेरिक होता है, यानी यह पेड़ पर ही पूरी तरह पकता है।
- इसे मई-जून में सही समय पर तोड़ना आवश्यक होता है।
- इसके उचित भंडारण से ताजगी और गुणवत्ता बनाए रखी जा सकती है।

प्रसंस्करण

- फलों को सुखाकर पाउडर बनाना, जिसे पोषण अनुपूरक के रूप में उपयोग किया जा सकता है।
- तेन्दू जैम, जेली और सिरप बनाना, जिससे यह एक स्वादिष्ट और स्वास्थ्यवर्धक विकल्प बन सकता है।
- किण्वन प्रक्रिया द्वारा इससे जैविक मदिरा (वाइन) का उत्पादन किया जा सकता है।
- आयुर्वेदिक दवाइओं और सौंदर्य प्रसाधनों में इसके जैव सक्रिय घटकों का उपयोग किया जा सकता है।

नई तकनीकों जैसे कि माइक्रोवेव-असिस्टेड एक्सट्रैक्शन के माध्यम से इसके औषधीय गुणों को प्रभावी ढंग से निकाला जा सकता है।

हालांकि, वनों की कटाई, जलवायु परिवर्तन और अधिक दोहन के कारण तेन्दू वृक्ष को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। इसके सतत प्रबंधन और बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण की आवश्यकता है।

तेन्दू फल अपने पोषण, औषधीय गुणों और आर्थिक संभावनाओं के कारण अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके प्रसंस्करण और व्यावसायिक उत्पादन से नए बाजार खुल सकते हैं और किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त हो सकती है।

वन संरक्षण और वैज्ञानिक अनुसंधान के माध्यम से इसके सतत उपयोग को सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। यह बहुउद्देश्यीय वृक्ष न केवल स्वास्थ्य बल्कि पर्यावरण और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए भी लाभदायक है। इसे संरक्षित और बढ़ावा देकर हम इसे भविष्य में और अधिक उपयोगी बना सकते हैं।

निवेदन

लेखक बंधु *फल फूल* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ निम्न पोर्टल पर ही अपने मोबाइल नम्बर के साथ भेजें। ध्यान रखें कि फोटो मौलिक होने के साथ जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1200 शब्दों की संख्या रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी भेज सकते हैं।

हमारा पोर्टल है :
epatrika.icar.org.in

–संपादक

सागौन उत्पादन से आय में वृद्धि

संग्राम भा चव्हाण[1], **उथप्पा ए. आर.**[2], **अमृत मोरडे**[1], **वनिता सालुंखे**[1] और **विजयसिंह काकड़े**[1]

सागौन को इमारती लकड़ी की प्रजातियों का राजा एवं समृद्धि का प्रतीक माना जाता है। अच्छा रंग, उत्कृष्ट काष्ठमयता एवं गुणवत्ता, स्थिरता, गैर-संक्षारक गुण और दीमक प्रतिरोधी आदि विशेषताएँ सागौन की लकड़ी में पायी जाती हैं। इसलिए, इसे दुनिया की सर्वश्रेष्ठ लकड़ी में से एक माना जाता है। सागौन का पहला मानव निर्मित वृक्षारोपण वर्ष 1842 में कोनोली और छोटू मेनन द्वारा नीलांबुर, केरल में किया गया था। नीलांबुर में पाए जाने वाले सागौन को उत्कृष्ट लकड़ी की उच्च गुणवत्ता के लिए भारत सरकार द्वारा भौगोलिक संकेत (जीआई) टैग प्रदान किया गया है। सीमांत, आर्थिक रूप से दुर्बल किसान सागौन की खेती से लाभ लेते हैं बल्कि बड़े भूमि मालिकों के लिए भी यह एक आशाजनक अवसर प्रदान करता है।

सागौन (*टेक्टोना ग्राँडिस*) एक लम्बा, पर्णपाती, उष्ण कटिबंधीय वृक्ष है, जिसकी लम्बाई 30-40 मीटर तथा तने की गोलाई 1-2 मीटर होती है।

सागौन की लकड़ी का प्रमुख उपयोग फर्नीचर, जहाज निर्माण, संगीत साजों-सामान और घर निर्माण के कार्यों के लिए होता हैं। सागौन बीज का उपयोग सौंदर्य प्रसाधन उद्योग बनाने में किया जाता है।

सागौन के मुख्यत: पाँच उद्‌गम स्थान हैं जो अपनी अलग विशेषताओं से प्रसिद्ध है।

- **नीलांबूर सागौन:** आकार, स्थिरता एवं जहाज निर्माण
- **अल्लापली सागौन:** रंग एवं संरचना
- **सिवनी एवं बस्तर सागौन:** स्वर्णपित एवं सारकाष्ठ और रसकाष्ठ का एकत्रित मिश्रण
- **गोदावरी घाटी का सागौन:** सजावटी नक्काशी और बहुत महंगा फर्नीचर
- **आदिलाबाद सागौन:** गुलाबी रंग का सारकाष्ठ

जलवायु और मिट्टी

सागौन का नमी और गर्म उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उत्तम विकास होता है। सागौन आमतौर पर 800 से 2500 मिमी. वर्षा वाले क्षेत्र में और समुद्र तल से लगभग 1,200 मीटर ऊँचाई तक अच्छी तरह से बढ़ता है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में भी इसकी सफलतापूर्ण खेती की जा सकती है। कम वर्षा और अधिक तापमान में धीमी वृद्धि होती है, लेकिन उच्च गुणवत्ता

सागौन की क्यारियों में तैयार पौध

[1]भाकृअनुप-राष्ट्रीय अजैविक स्ट्रैस प्रबंधन संस्थान, बारामती, पुणे, महाराष्ट्र-413115; [2]भाकृअनुप-केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान, एला, गोवा-403402

स्टॉम्प बनाने हेतु निकाली हुई सागौन की पौध

पौध रोपण तकनीकी

गर्मी के मौसम में भूमि की ध्यानपूर्वक जुताई करके 60 × 60 × 60 सें.मी. आकार के गड्ढों को तैयार करना चाहिए। रोपण के दौरान, पौधों के बीच का अंतर 2 × 3 मीटर या 4 × 3 मीटर होना चाहिए। कृषिवानिकी पद्धति में, पंक्ति से पंक्ति और पौधे से पौधे की दूरी 4 × 6 मीटर तथा 8 × 4 मीटर होनी चाहिए। वृक्षारोपण के लिए, पहले 10 किलोग्राम गोबर और 250 ग्राम नीम की खली को गड्ढों में डालनी चाहिए। इसके बाद, प्रति पौधा 50 ग्राम एन.पी.के. का मिश्रण देना चाहिए। दूसरे वर्ष में 100 ग्राम एन.पी.के. और तीसरे वर्ष में 150 ग्राम एन.पी.के. उर्वरक का उपयोग करके बढ़ाया जा सकता है। मानसून में सागौन के ठूंठ (स्टॉम्प) को जमीन में गाड़ने के बाद किनारे की मिट्टी को अच्छी तरह से दबाना जरूरी है ताकि मिट्टी में कोई हवा न रहे।

सागौन की रूट ट्रेनर की पौध

वाली लकड़ी का उत्पादन होता है।

सागौन की सबसे अच्छी पैदावार जलोढ़ एवं जल निकासी मिट्टी में पायी जाती है। जहां मृदा का पी.एच. 6.5 से 7.5 होता है तथा चूना-पत्थर, शैल, भूसी और बेसाल्ट से बनी हुई कैल्शियमयुक्त मिट्टी में सागौन सबसे अच्छा पनपता है। सूखी रेतीली, उथली, कठोर, अम्लीय, काली और जल भराव वाली मिट्टी में सागौन का पौधा ठीक से विकसित नहीं होता।

नर्सरी में सागौन पौध की तैयारी

बीज के माध्यम से

सागौन के फल कठोर होते हैं तथा इसकी बीज अंकुरण क्षमता कम (30%) होती है। बीज पूर्व उपचार विधि में, सागौन के फलों को पानी में 24 घंटे तक भिगोया जाता है, फिर सख्त सीमेंट वाली सतह पर फैलाकर सुखाया जाता है, इस प्रक्रिया को 7-10 बार दोहराने से लगभग 50-70% तक सर्वोत्तम अंकुरण होता है।

फलों का चयन व्यास में 14 मिमी. से अधिक बड़े बीजों का उपयोग बेहतर अंकुरण देता है। बीजों को 10 मीटर लम्बे, 1 मीटर चौड़े और 0.5 मीटर ऊंचाई पर उठी हुई क्यारियों में बोया जाता है, लगभग 40 दिनों के बाद अंकुरण शुरू होता है।

अवैज्ञानिक छंटाई के कारण गाँठयुक्त सागौन

रूट ट्रेनर में बीजों को बोया जाता है, जिससे रूट क्वाइलिंग (जड़ों का गुच्छा) से बचने में मदद मिलती है। इस तरीके से 6 से 7 माह के अंदर उच्च गुणवत्ता वाले पौधे तैयार हो जाते हैं।

रूट-शूट या स्टॉम्प के माध्यम से

मुख्य रूप से सागौन के बागानों में रोपण सामग्री के रूप में रूट-शूट या स्टॉम्प का उपयोग किया जाता है। एक वर्ष पुराना पौधा (अंगूठे जैसी मोटाई वाले) नर्सरी क्यारी से उखाड़कर तने (शूट) के 2.5 सें.मी. पर तिर्यक कट और 20-30 सें.मी. जड़ का भाग लेकर स्टॉम्प बनाया जाता है। स्टाम्प के कारण सागौन की तेजी से और लंबवत (सीधी) वृद्धि होती है। इस तकनीकी को सर्वश्रेष्ठ माना गया है।

रखरखाव

सागौन के बागानों में, लगभग दो-तीन महीने के अंतराल पर निराई-गुड़ाई करने से पौधे के तने के पास जड़ों को हवा मिलती रहती है और मिट्टी को खरपतवार मुक्त रखने में मदद मिलती है। सागौन में छंटाई (प्रूनिंग) एवं विरलीकरण (थीनिंग) के बिना उचित गुणवत्ता की लकड़ी प्राप्त नहीं होती है।

छंटाई: सागौन की छंटाई दूसरे या तीसरे वर्ष में जब पौधा 3-4 मीटर ऊंचा होता है तब मार्च से मई में की जाती है। जमीन से एक-तिहाई ऊंचाई पर पेड़ की छंटाई करनी चाहिए। इसके बाद सूखी, रोगग्रस्त और निचली शाखाओं को मुख्य तने से 2-3 सें.मी. ऊपर तेज हथियार से काटना चाहिए।

उचित छंटाई से गांठ रहित और उच्च गुणवत्ता वाली लकड़ी का उत्पादन मिलता है।

विरलन: विरलन का मुख्य उद्देश्य वृक्षों की गुणवत्तापूर्ण वृद्धि के लिए पर्याप्त सूर्यप्रकाश, जगह, पानी और पोषक तत्व प्रदान करना है। इसमें रोगग्रस्त, मृत और तनावग्रस्त वृक्षों के साथ-साथ स्वस्थ वृक्षों की संख्या

कुछ हद तक कम करते हैं।

सागौन का वृक्षारोपण सघन तकनीक जैसे कि 2 × 2 मी. या 3 × 3 मी. दूरी पर करते है तो विरलन की आवश्यकता होती है। इस क्रिया में 5-7 वर्ष अवधि में एक के बाद एक पौधे को काट दिया जाता है, जिससे 50 प्रतिशत तक पौधे कम हो जाते हैं।

यदि दो पंक्तियों के बीच की दूरी 4 मीटर से अधिक है, तो कृषिवानिकी में आमतौर पर विरलन की आवश्यकता नहीं होती है।

गुलाब-सागौन-आधारित कृषिवानिकी पद्धति

उपयुक्त कृषिवानिकी पद्धति: भारत में विभिन्न कृषिवानिकी पद्धतियों का अनुसंधान किया गया है, जैसे कि कृषिवन पद्धति (सागौन के साथ मक्का, कपास, हल्दी और मिर्ची जैसी फसल उगाई जा सकती हैं), कृषि-वन-फलवृक्ष (जिसमें सागौन के साथ नीबू/अमरूद के साथ कृषि फसल उगाई जा सकती हैं) और वृक्ष सह फल वृक्ष पद्धतियाँ (जैसे कि सागौन-अमरूद या सीताफल) भी अपनाई जा सकती है। इसके अलावा, किसान खेत की मेड़ (2 से 3 मीटर की दूरी) पर सागौन लगा सकते हैं, जिससे फसल को धूप और हवा से भी सुरक्षा मिलेगी।

पौध संरक्षण

सफेद सुंडी (*होलोट्रिचिया प्रजाति*) पौधशाला में जड़ों पर आक्रमण करती है और इसके प्रबंधन के लिए क्लोरोपाइरीफॉस (20 ईसी) 2 मिली/लीटर पानी और प्रकाश जाल का उपयोग करते हैं। सागौन डिफोलिएटर तथा पर्णनाशी किट (*हाइब्लिया पुएरा*) और स्केलेटनायजर तथा कंकाल कीट (*यूटेक्टोना माचेरालिस*) से सागौन का उत्पाद 44 प्रतिशत तक कम होता है। जुलाई से अगस्त के महीनों में आर्द्र मौसम में नई पत्तियों पर पर्णनाशी कीट का संक्रमण होता है और बाद में अगस्त में पत्ती-छानने वाले कंकाल कीट पुरानी पत्तियों को खा जाती हैं। पर्णनाशी कीट के लिए प्रकाश जाल तथा नीम तेल 5% छिड़काव करना चाहिए। पर्णकंकाल कीट के लिए सागौन को मिश्र पद्धति में तथा क्विनोलफॉस 2 मिली/लीटर पानी के साथ छिड़काव करना चाहिए।

कंकाल कीट (*यूटेक्टोना माचेरालिस*)

पर्णनाशी कीट (*हाइब्लिया पुएरा*)

उत्पादन

सागौन रोपण के 25-30 वर्षों बाद, मध्य प्रदेश के रायसेन में उचित प्रबंधित वृक्षारोपण से प्रति पेड़ लगभग 0.26-0.36 घन मीटर इमारती लकड़ी का उत्पादन प्राप्त हुआ है।

बारामती (पुणे) में 25 वर्षों के बाद एक किसान के खेत में काटे गए एक वृक्षारोपण से प्रति पेड़ 0.15-0.30 घन मीटर की इमारती लकड़ी प्राप्त हुई। इसी प्रकार शुक्ला और विश्वनाथ ने वर्ष 2021 मे प्रबंधित सागौन कृषिवानिकी प्रणाली से (जिसे 2×2 मीटर पर लगाया गया और 4 साल में विरलन किया गया), 25 वर्षों के बाद प्रति पेड़ 0.85 घन मीटर की व्यावसायिक लकड़ी और बिना विरलन से 0.22 घन मीटर की लकड़ी का उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। ■

सागौन की लकडियाँ

उपयोगिता

बागवानी में आर्बस्कुलर माइकोरिज़ल कवक की भूमिका

काव्या टी और **गीता सिंह**

रासायनिक उर्वरकों के निरंतर उपयोग एवं जलवायु परिवर्तन से कृषि उत्पादकता कम हो रही है। इसके अलावा निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव, खाद्य विषाक्तता, मृदा क्षति, जैव विविधता का नुकसान और अन्य पर्यावरणीय क्षति भी देखी जा रही है। इसके परिणामस्वरूप अधिक फसल उपज और गुणवत्ता के लिए अधिक टिकाऊ बागवानी प्रथाओं के लिए प्रयास करने की आवश्यकता है। इसके अंतर्गत पोषक तत्वों के अवशोषण में सुधार करने और मिट्टी में पोषक तत्वों के भंडार को बढ़ाने वाली विधियों का उपयोग अधिकतम करना चाहिए। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए, विशेष रूप से आर्बस्कुलर माइकोरिज़ल कवक (ए.एम.एफ.) में सूक्ष्मजीवों का उपयोग लाभकारी विकल्प हो सकते हैं। इस दिशा में माइकोराइजल इनोक्युलेंट अकार्बनिक और कार्बनिक यौगिकों से पोषक तत्वों के अवशोषण और संचार को बेहतर बना सकते हैं और कम उर्वरता वाली मिट्टी में भी फसल उत्पादन बढ़ा सकते हैं। कई अध्ययनों से ज्ञात हुआ कि पौधों की जड़ों से जुड़े सूक्ष्मजीव सामान्य और तनावपूर्ण वातावरण में पौधों की वृद्धि और उत्पादकता में सुधार करने में मदद कर सकते हैं। इसी वर्ग में माइकोराइजा पौधे की जड़ों और कवक के बीच के संबंध को संदर्भित करता है।

आर्बस्कुलर माइकोरिज़ल कवक (ए.एम.एफ.), एक अनिवार्य पौधे की जड़ का सहजीवी है, जो 80% पौधों की जड़ों को उपनिवेशित कर सकता है। पौधे को मिट्टी से पानी और पोषक तत्व जैसे फॉस्फेट, जिंक, सल्फेट, मैंग्नीज, मैग्नीशियम, नाइट्रोजन अणु, पोटेशियम और तांबा लेने में मदद मिलती है।

सूक्ष्मजीव विभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

इसके बदले में, यह पौधों से 20% प्रकाश संश्लेषक कार्बोहाइड्रेट प्राप्त करता है। इसके कवक तन्तु (हाइफे) एक व्यापक भूमिगत तंत्र बनाते हैं। इससे पौधे की जड़ों, मिट्टी और संबंधित सूक्ष्मजीव के बीच एक सीधा संबंध बनता है। कवक तन्तु (हाइफे) का सतही क्षेत्र जड़ के सतही क्षेत्र की तुलना में लगभग 100 गुना अधिक होता है और उनकी लंबाई पौधे की जड़ प्रणाली की तुलना में कई गुना अधिक हो सकती है, जिसके कारण वे अकेले जड़ों की तुलना में मिट्टी में से अधिक मात्रा में पोषक तत्व एवं पानी के अवशोषण को सुगम बनाता है।

बागवानी पौधों की पोषण गुणवत्ता में वृद्धि

ए.एम.एफ. जैविक स्रोतों से भी पोषक तत्वों को पहुँचने में सक्षम बनाता है। बागवानी पौधों जैसे कि खीरा, नीबू, काली मिर्च, टमाटर, भिंडी, अल्फाल्फा, मटर, सेब, संतरा और अलसी में ए.एम.एफ. ने सफलतापूर्वक प्रदर्शन किया गया है। ए.एम.एफ. के टीकाकरण से मिर्च के पौधों की वृद्धि और गुणवत्ता में सुधार हुआ है।

गैर-टीकाकृत की तुलना में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, लोहा, जस्ता अवशोषण की मात्रा में वृद्धि हुई। इसके अलावा, आलू के पौधों में, कम मृदा फॉस्फोरस सांद्रता पर गैर-माइकोराइजल पौधों की तुलना में *ग्लोमस इंट्राराडाइसिस* के टीकाकरण के बाद वृद्धि

उपज में सुधार

अध्ययन में *फनेलिफॉर्मिस मोसी* और *डायवर्सिसपोरा वर्सिफॉर्मिस*, एफ. मोसी और *ग्लोमस इंट्राराडाइसिस* के मिश्रण का नीबू की जड़ प्रणाली पर टीकाकरण किया गया। फलस्वरूप जड़ में फॉस्फोरस, पोटेशियम, तांबा, जस्ता और मैंग्नीज सांद्रता, फॉस्फोरस, मैंग्नीज और लोहा सांद्रता, सहकर्मी रंग मान एवं फल व्यास अनुदैर्ध्य अक्ष, साथ ही जड़ जीवन शक्ति में 36%-76% की वृद्धि हुई। ग्लोमस मोसेई और एजोटोबैक्टर क्रोकोक्कम जीवाणु ने अनार की फल उपज में सुधार किया। ए.एम.एफ. और पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले राइजोबैक्टीरिया के अनुप्रयोग ने अकार्बनिक और कार्बनिक उर्वरक उपयोग स्थितियों दोनों के तहत लेट्यूस की वृद्धि, पोषक तत्व अवशोषण, प्रकाश संश्लेषण दर और रंध्र प्रदर्शन में सुधार किया है।

स्वस्थ बैंगन

सह टीकाकरण से गुणवत्ता में सुधार

पादप वृद्धिकारक राइजोबैक्टीरिया– *स्यूडोमोनास, एज़ोटोबैक्टर, एज़ोस्प्रिलम* और ए.एम.एफ के सह–टीकाकरण द्वारा टमाटर में लाइकोपीन, पोटेशियम और एंटीऑक्सीडेंट तत्व में सुधार हुआ। कंद में टीकाकरण द्वारा फॉस्फोरस दक्षता में उल्लेखनीय सुधार और प्याज के ताजे और सूखे कंदों में, क्लोरोफिल की मात्रा के साथ-साथ जड़, टहनी और बल्ब में फॉस्फोरस सांद्रता में वृद्धि देखी गयी है। ए.एम.एफ. और सेलेनियम के संयुक्त उपयोग ने बल्ब की पैदावार, जैव रासायनिक विशेषताओं, सूक्ष्म तत्वों (बोरॉन, लोहा, तांबा, मैंग्नीज और जिंक) और फ्लेवोनोइड्स की भी वृद्धि देखी गयी है।

संवर्धन, जड़ अंकुरण फॉस्फोरस उपयोग दक्षता और कम पत्ती से कंद अनुपात प्रदर्शित हुआ।

ग्लोमस इंट्राराडाइसिस टीकाकरण द्वारा लीक के पौधों में फॉस्फोरस और जस्ता अवशोषण में गैर–टीकाकृत की तुलना में वृद्धि हुई। ए.एम.एफ. सब्जी फसलों में नाइट्रोजन अवशोषण को भी बढ़ा सकता है। *ग्लोमस फैसीकुलैटम* या *ग्लोमस इंट्राराडाइसिस* और *ग्लोमस मोसी* के मिश्रण से उपचारित लेट्यूस पौधे में पोटेशियम की सांद्रता और कई खनिज पोषक तत्त्वों जैसे कि लोहा, तांबा और जस्ता, गैर–माइकोराइजल लेट्यूस पौधों की तुलना में काफी अधिक थे। ए.एम.एफ. टीकाकरण से अंकुरण, पौधे की ऊंचाई, जड़, अंकुर की लंबाई और वजन में वृद्धि हो सकती है। भिंडी, टमाटर, बैंगन और मिर्च में गैर–टीकाकृत नियंत्रण की तुलना में टीकाकृत पौधों के पोषक तत्व (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम, लोहा और जस्ता) के अवशोषण में वृद्धि दर्ज की गई थी।

बागवानी फसलों में जैविक और अजैविक तनाव का प्रबंधन

रोग का स्थायी समाधान

जैविक फल एवं सब्जियों की उत्पादन प्रणाली में रोग संक्रमण एक गंभीर समस्या है। रोग प्रबंधन के लिए ए.एम. कवक का टीकाकरण एक स्थायी समाधान सिद्ध हुआ है। *ग्लोमस मोसी* टीकाकरण कैटरपिलर *हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा* के लार्वा की संख्या पर प्रभाव पड़ा। ए.एम.एफ. के साथ अकेले या *स्यूडोमोनास फ्लोरोसेंस* के संयोजन से उपचारित फलियाँ, क्षेत्र की स्थितियों के तहत जड़–सड़ांध सहनशीलता और उच्च उपज प्राप्त हैं।

एक अन्य शोध में पाया गया कि ए.एम.एफ. संघ (*ग्लोमस एसपीपी* और *एकाउलोस्पोरा एसपीपी*) के संयुक्त उपचार से खीरे की उपज में बायोमास वृद्धि, तथा फ्यूजेरियम विल्ट के संक्रमण की घटना कम हुई। *फनेलिफॉर्मिस मोसी* द्वारा उपचारित पौधे और ए.एम.एफ. एवं ट्राइकोडर्मा के संयुक्त अनुप्रयोगों ने क्रमशः 23.55% और 21% की रोग नियंत्रण के साथ फ्यूजेरियम बेसल रॉट की तीव्रता कम देखी गई है।

सारणी : बागवानी फसलों पर आर्बुस्कुलर माइकोराइजा टीकाकरण का लाभकारी प्रभाव

फसल	माइकोराइजल कवक	लाभकारी प्रभाव
टमाटर	*ग्लोमस मोसेई और ट्राइकोडर्मा हरजिनियम*	लाइकोपीन और पोषक तत्व सामग्री में वृद्धि
तुलसी	*राइजोफैगस इरेगुलरिस और सेरेन्डीपिता इंडिका*	आवश्यक तेल लिनालूल और यूकलिप्टोल की मात्रा में सुधार
अनार	*ग्लोमस मोसेई, एकाउलोस्पोरा लेविस और जी. मैनीहोटिस*	फिनोल, एंजाइम कैटेकोलेज और क्रेसोलेज
सेब	*राइजोफैगस अनियमितता*	कुल शर्करा, प्रोलाइन और क्लोरोफिल सांद्रता
लेट्यूस	*ग्लोमस मोसी और ग्लोमस इंट्राराडाइसेस*	टोकोफेरॉल, विटामिन, खनिज
संतरा	*ग्लोमस मोसी, ग्लोमस इंट्राराडाइसिस और ग्लोमस होई*	क्लोरोफिल, प्रोलाइन और कार्बोहाइड्रेट सांद्रता, शर्करा, और एब्सिसिक एसिड
ककड़ी	*ग्लोमस एटुनिकाटम*	फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम के प्रति सहनशीलता
आलू	*ए.एम.एफ + एपिकोकम नाइग्रम एएसयू11*	पेक्टोबैक्टीरियम कैरोटोवोरा के प्रति सहनशीलता
गुलाब	*ग्लोमस एग्रीगेटम, ग्लोमस फासिकुलैटम, ग्लोमस और ग्लोमस मोसी*	बायोमास उत्पादन में वृद्धि
मटर	*ग्लोमस इंट्राडाइसिस*	फ्यूजेरियम यूटेइचेस के प्रति सहनशीलता
टमाटर	*ए.एम.एफ और ट्राइकोडर्मा हरजियानम एमजैड 025966*	सूत्रकृमि प्रतिरोधक क्षमता (मेलोइडोगाइन जावानिका)
ककड़ी	*ग्लोमस इंट्राराडाइसिस, ग्लोमस मोसी, ग्लोमस वर्सीफोर्म*	मेलोइडोगाइन इनकॉग्निटा
तरबूज	*ग्लोमस इंट्राराडाइसिस*	शीत तनाव
गेंदे का फूल	*ग्लोमस मोसिया और ग्लोमस इंट्राराडाइसिस*	सीसा और कैडमियम विषाक्त
बैंगन	*फनेलिफोर्मिस मोसेई, क्लेरोइडोग्लोमस एट्यूनीकैटम, राइजोफैगस इरेगुलरिस, और डायवर्सिसपोरा वर्सीफोर्मिस*	शीत तनाव
टमाटर	*सेप्टोग्लोमस डेजर्टिकोला और सेप्टोग्लोमस कॉन्स्ट्रिक्टम*	ऊष्णता तनाव

ए.एम.एफ. टीकाकरण से प्रकाश संश्लेषण दर, तनाव रोधी वाष्पोत्सर्जन, जल चालकता में इलेक्ट्रॉन संचार दर के साथ क्लोरोफिल और कैरोटीनॉयड सांद्रता में वृद्धि करके अंगूर की बेल पर विषाणु संक्रमण प्रभाव को कम किया। इसके साथ ही अमरूद के पौधों में टीकाकरण द्वारा सूत्रकृमि संक्रमण के प्रति अधिक सहनशीलता और वृद्धि देखी गई।

अजैविक तनाव उच्च तापमान, निम्न तापमान, सूखा, लवणता और भारी धातु तनाव की जैसी स्थिति पौधों की उपज एवं गुणवत्ता को क्षति पहुँचाते हैं। अजैविक तनाव से पौधों को आयन अवशोषण, एंजाइम गतिविधि और पोषक तत्वों के आत्मसात करने की क्षमता, एवं विभिन्न चयापचय प्रक्रियाओं पर प्रभाव पड़ता है।

आर्बस्कुलर माइकोरिजल कवक अजैविक तनाव के प्रति सहनशीलता प्रदान करता है। फनेलिफॉर्मिस मोसी उपचारण से खीरे के पौधों में फिनोल, फ्लेवोनोइड्स सहित अन्य लाभकारी द्वितीयक मेटाबोलाइट्स पदार्थ में व्यापक सुधार हुआ। इसके साथ ही शीत तनाव के प्रति सहिष्णुता चयापचय और एंटीऑक्सीडेंट जैवरासायनिक गतिविधियों में भी सुधार हुआ।

फनेलिफोर्मिस मोसी और *ग्लोमस गिगेंटिया* के उपचारण से सूखा तनाव में गाजर के मिली जल अवशोषण में सुधार हुआ है, इसका मुख्य कारण फाइटोहोर्मोन सामग्री का परिवर्तन है, इससे गुणवत्ता और उपज में सुधार देखा गया है। तन्तुओं में कैडमियम को बनाए रखने में एवं इससे पौधे की सहनशीलता को बढ़ाने में मदद मिली।

हरित गृह में टीकाकरण से लैवेंडर के पौधे को सीसा और जस्ता के प्रतिकूल प्रभाव से सुरक्षा मिली और पौधे में आवश्यक तेल की मात्रा एवं उपज में वृद्धि देखी। ए. एम. कवक और एस्परगिलस टेरस के संयुक्त टीकाकरण के परिणामस्वरूप टमाटर बायोमास उत्पादन में बेहतर वृद्धि हुई और साथ ही क्रोमियम संदूषित मिट्टी में फल उत्पादन में भी वृद्धि हुई।

उत्पादित खीरा

टमाटर, मिर्च और खीरे की फसलों में फफूंद उपचारण द्वारा उच्च ताप ऊष्मा तनाव के प्रति सहनशीलता में सुधार देखा गया है साथ ही क्षतिग्रस्त/मृत पत्तियों की संख्या में कमी और फलों का उत्पादन भी बढ़ा है। *फनेलिफॉर्मिस मोसी, क्लैरोइडोग्लोमस एट्यूनिकैटम, राइजोफेगस इरेगुलरिस* और *ड़ायवर्सिसपोरा वर्सिफॉर्मिस* के उपचारण द्वारा अमीनो अम्ल प्रोलाइन और मुक्त फेनोलिक्स जैसे सुरक्षात्मक अणुओं का एकत्रीकरण फोटोकैमिकल प्रतिक्रियाओं में सुधार एवं एंटीऑक्सीडेंट रक्षा प्रणालियों द्वारा कोशिका झिल्ली में कम क्षति हुई। इसके फलस्वरूप बैंगन में शीत तनाव प्रतिरोधक क्षमता विकसित हुई।

सब्जियों के सतत उत्पादन में ए.एम.एफ. कवक उपयोगी

एक अन्य अध्ययन में तरबूज के पौधों के शरीरक्रिया और जैव रासायनिक गुणों में सुधार के फलस्वरूप पौधों में तनाव प्रतिरोधिता को बेहतर बनाने में *ग्लोमस इंट्राराडाइसिस* सिम्बायोसिस की महत्वपूर्ण भूमिका देखी गई है और यह भी पाया गया है कि 36 घंटे के शीत तनाव के साथ संयुक्त ए.एम.एफ सिम्बायोसिस ने अजैविक तनाव प्रतिरोधी स्वजाईया पेरोक्सीडेज गतिविधि को महत्वपूर्ण रूप से प्रेरित किया।

टीकाकरण द्वारा खीरे में पीले मोजैक वायरस के लक्षणों को 50% तक कम किया और गैर-उपनिवेशित पौधों की तुलना में रोग की गंभीरता को 26% तक सीमित कर दिया। ए.एम.एफ मृदा रोगजनकों जैसे *फ्यूजेरियम, फाइटोफ्थोरा, वर्टिसिलियम और एर्विनिया कैरोटोवोरा और स्यूडोमोनास सिरिंगे* पर भी विपरीत प्रभाव देखा गया है।

संरक्षण

प्रकृति की मूल्यवान धरोहर है बेहमी

अरुण कुमार[1], **इंद्र देव**[2], **दुर्गा प्रशाद भंडारी**[1] और **दीपिका**[1]

हिमाचल प्रदेश का किन्नौर जिला अपनी ठंडी और शुष्क जलवायु के लिए जाना जाता है, जो बेहमी (प्रूनस मीरा) उगाने की सदियों पुरानी परंपरा के लिए उपयुक्त है। हिमालयी क्षेत्र और उच्च पर्वतीय इलाकों में पाया जाने वाला यह पौधा, जिसे 'रेग' या 'तिब्बती आड़ू' भी कहा जाता है, अपने खट्टे-मीठे फलों, बीजों और सांस्कृतिक महत्व के लिए प्रसिद्ध है। इसके बीज की गिरी कड़वी और मीठी स्वाद की होती है, जिनमें कड़वी गिरी अधिक औषधीय गुणों से भरपूर होती है। किन्नौर क्षेत्र से प्राप्त बेहमी के सूखे फल का औसत भार 3.04 ग्राम होता है। इसमें गूदे का 1.78 ग्राम, बीज का 1.14 ग्राम, गिरी का 0.21 ग्राम और बीज के खोल का 0.94 ग्राम भार होता है। इसके सूखे फल और बीज का आकार क्रमशः 25.24 × 18.04 मिमी. और 20.28 × 13.09 मिमी. होता है। यह पौधा न केवल पोषण का स्रोत है, बल्कि स्थानीय परंपराओं और रीति-रिवाजों में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसे तेल निकालने, औषधीय उपयोगों और खट्टे-मीठे स्वाद के लिए उगाया जाता है। इस प्रजाति को विलुप्त होने से बचाने के लिए इसकी खेती को बढ़ावा देना आवश्यक है।

बेहमी एक बहुमूल्य पौधा है, जो औषधीय, पोषण, सांस्कृतिक और आर्थिक महत्व रखता है। इसके स्वादिष्ट और पौष्टिक फल विटामिन, खनिज, सूजनरोधी और एंटीऑक्सीडेंट गुणों से भरपूर होते हैं, जो पाचन तंत्र, मासिक धर्म विकारों और बालों के स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद हैं। इसके बीजों से निकाला गया तेल त्वचा और बालों की देखभाल में उपयोगी होता है।

पारंपरिक चिकित्सा में इसके फलों और बीजों का उपयोग ऊर्जा और स्वास्थ्य बढ़ाने के लिए किया जाता है। पारंपरिक उपयोगों में बीजों से तेल निकालना, 'रेगु राक' मादक पेय बनाना, अचार तैयार करना और बीजों का पेस्ट चावल के साथ पकाकर 'रेमो थुक्पा' बनाना शामिल है, जो सर्दियों में गर्मी और ऊर्जा प्रदान करता है। ये पेय और व्यंजन स्थानीय त्योहारों, शादियों और धार्मिक अवसरों का अभिन्न हिस्सा हैं।

[1]वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केंद्र, किन्नौर; [2]निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन

बीजों की बुआई की प्रक्रिया

किन्नौर की जलवायु अनुकूलता

किन्नौर की ठंडी और शुष्क जलवायु बेहमी (प्रूनस मीरा) की वृद्धि के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। यह पौधा मुख्यतः 2000 से 4000 मीटर की ऊँचाई पर प्राकृतिक रूप से पाया जाता है। सर्दियों की बर्फबारी और गर्मियों की हल्की नमी इसकी वृद्धि के लिए आदर्श है। यह -15° से. तक के तापमान और पोषक तत्वों से कमजोर मिट्टी में भी आसानी से पनप सकता है, जिससे इसे विभिन्न प्रकार की मृदा में उगाना संभव है। इसके लिए पहाड़ी ढलानों, तटीय क्षेत्रों या समतल भूमि को प्राथमिकता दी जाती है, जो जल निकासी और वृद्धि में सहायक होती है।

रेतीली दोमट मिट्टी, जिसका पीएच मान 6.5-7.5 हो, इसकी वृद्धि के लिए सबसे उपयुक्त है। इसके मजबूत जड़ तंत्र न केवल मिट्टी के कटाव को रोकते हैं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान देते हैं। इस प्रकार, किन्नौर की जलवायु और भौगोलिक विशेषताएं बेहमी की जैविक आवश्यकताओं के अनुकूल हैं।

बेहमी की पौधशाला और रोपण तकनीक

बेहमी की पौधशाला तैयार करने और रूटस्टॉक के रूप में उपयोग के लिए वैज्ञानिक तकनीकों का पालन आवश्यक है। बीज अंकुरण बढ़ाने के लिए उन्हें 60-90 दिनों तक 4° से. पर ठंडी स्तरीकरण प्रक्रिया में रखा जाता है। बुआई से पहले बीजों को 24 घंटे गर्म पानी में भिगोकर उनका कठोर आवरण नरम किया जाता है। इन्हें हल्की, दोमट मिट्टी (पीएच मान 6.5-7.5) वाले 15-20 सें.मी. उठी हुई क्यारियों में बोया जाता है।

अंकुरण के बाद पौधों को नियमित सिंचाई और जैविक खाद से पोषित किया जाता है। जब पौधे 25-30 सें.मी. ऊँचाई तक पहुँच जाते हैं, तो उन्हें स्थायी खेत में स्थानांतरित किया जाता है। ग्राफ्टिंग और बडिंग तकनीकों

से आड़ू, बादाम और प्लम जैसी फसलें उगाई जाती हैं, जिसमें पौधों के बीच 4-5 मीटर की दूरी रखी जाती है।

बेहमी का रूटस्टॉक सूखे और रोगों के प्रति सहिष्णु होता है और जीएफ-677 या प्रुनुस सेरासिफेरा जैसे रूटस्टॉक्स के साथ क्षारीय मिट्टी और सूखे में भी अच्छा प्रदर्शन करता है। यह तकनीक पौधों के स्थायित्व, रोग-प्रतिरोध और उत्पादन क्षमता को बढ़ाती है। सिंचाई और पोषण प्रबंधन के लिए गर्मियों में हर 15-20 दिनों पर हल्की सिंचाई और सर्दियों में न्यूनतम पानी देना चाहिए। विशेष रूप से मई-जून के दौरान फलों के विकास चरण में नियमित सिंचाई से फलों का आकार और गुणवत्ता बेहतर होती है। उचित पोषण और सिंचाई न केवल उपज बढ़ाते हैं, बल्कि फलों के स्वाद और भंडारण क्षमता को भी सुधारते हैं।

बेहमी पौधे के फल, फूल, गिरी एवं पत्तियां

मल्चिंग और पोषण प्रबंधन

बेहमी पौधों के लिए मल्चिंग मिट्टी की नमी बनाए रखने, खरपतवार नियंत्रित करने और उर्वरता बढ़ाने में मददगार है। हालांकि, ये पौधे खेतों के कोनों या दीवारों के पास स्वतः उगते हैं, जिससे गीली घास या प्लास्टिक शीट का उपयोग कठिन हो जाता है। ऐसे में पौधे के तने से 5-10 सें.मी. की दूरी पर जैविक मल्चिंग सामग्री का उपयोग फायदेमंद होता है। इन पौधों की गहरी जड़ें मिट्टी की निचली परतों से पोषक तत्व प्राप्त करती हैं, लेकिन बेहतर विकास और फलन के लिए जैविक खाद और संतुलित पोषण की आवश्यकता होती है। गोबर खाद और कम्पोस्ट के साथ नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम का संतुलित उपयोग करने से बेहमी के पौधों में बेहतर उत्पादन और गुणवत्ता प्राप्त की जा सकती है, विशेषकर किन्नौर के ऊंचाई वाले क्षेत्रों में।

सांस्कृतिक एवं आर्थिक महत्व

सांस्कृतिक रूप से, 'रेगु राक' देवताओं की पूजा में चढ़ाया जाता है, और बीजों से बनी मालाएं, प्रेम, सम्मान और सामंजस्य का प्रतीक मानी जाती हैं। आर्थिक दृष्टि से, इसके फल, बीज और तेल की बाजार में भारी मांग है। फल और बीज से बने अचार और पेय व्यावसायिक रूप से लाभदायक हैं, जबकि इसकी नई शाखाओं का उपयोग दांत साफ करने के लिए किया जाता है। जैविक खेती के माध्यम से इसके उत्पादों से किसान बेहतर आय अर्जित कर सकते हैं। इस प्रकार, प्रूनस मीरा न केवल स्थानीय समुदायों की धार्मिक और सामाजिक परंपराओं का हिस्सा है, बल्कि यह स्वास्थ्य और आर्थिक समृद्धि का भी स्रोत है।

काट-छांट और सिधाई

बेहमी के पौधों में सामान्यतः वृद्धि अधिक होती है और इन्हें कम सीधा या छांटा जाता है, क्योंकि ये जंगली प्रकृति के होते हैं। फिर भी, यदि इन पौधों में सही तरीके से सिधाई और छंटाई की जाए, तो इनकी वृद्धि नियंत्रित हो सकती है और उचित फल प्राप्त किए जा सकते हैं। आड़ू के पौधों को खुले और केंद्र प्रणाली में सीधा किया जाता है। नई टहनियों की छंटाई से गुणवत्ता और उत्पादन में सुधार होता है, इसलिए नई टहनियों को छांटकर पुरानी शाखाओं को हटा दें। छंटाई के बाद कटे स्थान पर फफूंदनाशक पेस्ट लगाना न भूलें, और हर वर्ष पौधों की हल्की छंटाई जरूर करें।

फूल और परागण प्रबंधन

बेहमी वसंत ऋतु की शुरुआत में गुलाबी या सफेद फूल खिलाता है, जो शीतोष्ण जलवायु में पौधे के स्वस्थ विकास और फल सेटिंग में अहम भूमिका निभाते हैं। अधिकांश प्रजातियां स्वपरागण में सक्षम होती हैं, लेकिन मधुमक्खियों और अन्य कीटों द्वारा परागण से फलों की गुणवत्ता और संख्या में सुधार होता है। चूंकि यह जंगली पौधा है, इस कारण किसान परागण प्रबंधन पर कम ध्यान देते हैं। परागण को बढ़ावा देने के लिए प्रति हैक्टर 2-3 मधुमक्खी बक्से रखना और फूल आने के समय हल्की सिंचाई करना प्रभावी उपाय हैं। परागण मित्र पौधों की उपस्थिति भी कीट-परागण को प्रोत्साहित करती है, जिससे फल का आकार और उत्पादन बेहतर होता है।

रोग प्रबंधन

यदि पौधों की सही देखभाल न की जाए, तो पुराने वृक्षों पर काई (2) और मिस्लटो (1) जैसी समस्याएं विकसित हो जाती हैं। मिस्लटो, जिसे गुएल भी कहा जाता है, एक अर्ध-परजीवी झाड़ी है जो पौधों की वृद्धि और विकास को बाधित करती है। इसके अलावा, यह कैंकर की समस्या को भी बढ़ा सकती है।

पुराने पौधे अक्सर इन समस्याओं से प्रभावित होते हैं और इन परजीवियों को हटाने के लिए कोई विशेष उपाय नहीं अपनाएं जाते। काई को नियंत्रित करने के लिए 2 किलोग्राम कास्टिक सोडा को 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। वहीं, मिस्लटो को उसके जुड़ाव के बिंदु से हटाकर नियंत्रित किया जा सकता है। यदि किसी प्रकार का कीट या फफूंद का आक्रमण

संरक्षण

बढ़ती आबादी, जलवायु परिवर्तन और वनों की कटाई के कारण बेहमी के प्राकृतिक आवास तेजी से घट रहे हैं, जिससे इसका अस्तित्व संकट में है। इसे संरक्षित करने के लिए *इन-सीटू* (प्राकृतिक आवास में) और *एक्स-सीटू* (बीज बैंक और वनस्पति उद्यान) विधियों को अपनाना अनिवार्य है। यह प्रजाति न केवल कृषि अनुसंधान और जैव प्रौद्योगिकी में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है, बल्कि स्थानीय समुदायों की जीवनशैली और संस्कृति का भी अभिन्न हिस्सा है। इसके संरक्षण के लिए सामुदायिक प्रयास, किसान जागरूकता और लुप्तप्राय प्रजातियों को बचाने के लिए संगठित प्रयासों की आवश्यकता है।

मिस्लटो झाड़ी का बेहमी के पौधे पर आश्रय

होता है, तो आड़ू में उपयोग किए जाने वाले कीटनाशक और फफूंदनाशक का छिड़काव प्रभावी हो सकता है।

उत्पादन और विपणन

बेहमी के फल सितंबर-अक्टूबर में पकते हैं, जिसे उनके हरे से पीले रंग में परिवर्तन और स्वाभाविक रूप से गिरने की प्रक्रिया से पहचाना जा सकता है। इस अवस्था में फल मुलायम हो जाते हैं, और उनकी त्वचा गूदे से आसानी से अलग हो जाती है, जो उनकी पूर्ण परिपक्वता का संकेत है। कटाई के लिए पारंपरिक विधियां अपनाई जाती हैं, जैसे पेड़ को हिलाना या लकड़ी की छड़ियों द्वारा फलों को गिराना।

गिरते फलों को कुशलतापूर्वक इकट्ठा करने के लिए पेड़ के नीचे प्लास्टिक की चादरें बिछाई जाती हैं। ताजे प्रूनस मीरा फल सीधे बाजार में कम ही बेचे जाते हैं। इन्हें मुख्यत: अचार, जैम और पारंपरिक पेय जैसे उत्पादों के लिए संसाधित किया जाता है। लंबे समय तक भंडारण के लिए फलों को धूप में सुखाया जाता है, जिससे नमी की मात्रा कम हो जाती है।

सूखे फल तेल निकालने और अन्य मूल्यवर्धित उत्पादों के लिए कच्चे माल के रूप में उपयोग किए जाते हैं। बीजों को सुखाकर तेल निकाला जाता है। यह पूरी प्रक्रिया फलों के आर्थिक और सांस्कृतिक महत्व को उनके मूल क्षेत्रों में दर्शाती है।

उत्पाद

ताजे फल, अचार, तेल और पारंपरिक पेय के रूप में विभिन्न उत्पाद बनाए जा सकते हैं। फल को कच्चा खाया जाता है या अचार और पारंपरिक पेय जैसे 'रेगु राक' बनाने में उपयोग किया जाता है। बीजों का पेस्ट पारंपरिक व्यंजन 'रेमो थुकपा' में मिलाया जाता है। बीजों की माला धार्मिक कार्यों और अतिथि सत्कार में उपयोग की जाती है।

कवक रोग से संक्रमित बेहमी का तना

भावी कदम

किन्नौर में बेहमी की खेती न केवल किसानों की आय बढ़ाने में सहायक है, बल्कि पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में भी अहम भूमिका निभा सकती है। पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक अनुसंधान के समन्वय से इसकी खेती को बढ़ावा दिया जा सकता है। यह प्रजाति न केवल जैव विविधता को संरक्षित करती है, बल्कि इसे वैश्विक कृषि में शामिल कर हिमालयी क्षेत्र के महत्व को भी रेखांकित करती है।

प्रूनस मीरा की कठोर परिस्थितियों में पनपने की क्षमता और औषधीय गुण इसे कृषि अनुसंधान के लिए व्यापक संभावनाएं प्रदान करते हैं। इस पहल से हिमालय की जैव विविधता को अंतर्राष्ट्रीय पहचान और संरक्षण मिलेगा, जो पर्यावरण और सांस्कृतिक धरोहर दोनों के लिए महत्वपूर्ण है।

किन्नौर के किसान पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक तकनीकों का उपयोग कर बेहमी की खेती को बढ़ावा देकर अपनी आजीविका सुधार सकते हैं। यह फलदार वृक्ष हिमालयी क्षेत्र की संस्कृति, परंपरा और आहार का अभिन्न हिस्सा है, जिसके फल, बीज और औषधीय उपयोग इसे अद्वितीय बनाते हैं।

आम में चूर्णिल आसिता रोग का प्रबंधन

प्रिंस कुमार गुप्ता, देवांशु देव और **मुकेश कुमार**

भारत में विभिन्न प्रकार की जलवायु होने के कारण करीब 140 प्रकार के रोग कारक फसल उत्पादन को विभिन्न स्तरों पर क्षति पहुंचाते हैं। इसी प्रकार आम में अनेक रोग लगते हैं जो नर्सरी से लेकर भण्डारण तक, हर स्तर पर आम को नुकसान पहुंचाते हैं। ये रोग पौधे के हर भाग जैसे तना, टहनी, पत्तियां, फल और जड़ को प्रभावित करते हैं। आम के विभिन्न रोगों में चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू) एक हानिकारक रोग माना जाता है जो *ओडियम मैंगिफेरा* नामक कवक द्वारा होता है। यह कवक आम के पुष्पक्रमों, पत्तियों और फलों के सभी भागों पर आक्रमण करता है और भारी नुकसान पहुंचता है। किसान फसलों की उचित देखभाल एवं एकीकृत रोग प्रबंधन कर चूर्णिल आसिता रोग से निजात पा सकते हैं।

भारत, विश्व में आम का सबसे अधिक उत्पादन करने वाला देश है परन्तु यहां उत्पादकता क्षमता से कम है। भारत में आम की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है। आम में लगने वाले रोगों एवं विकार इसके कम उत्पादन का एक प्रमुख कारण है जिससे तुड़ाई पूर्व एवं उपरान्त फसल को प्रतिवर्ष भारी नुकसान होता है।

आम में चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू) एक हानिकारक रोग माना जाता है जो *ओडियम मैंगिफेरा* नामक कवक द्वारा होता है। यह कवक आम के पुष्पक्रमों, पत्तियों और फलों के सभी भागों पर आक्रमण करता है जिससे लगभग 80-100 प्रतिशत तक उत्पादन में क्षति हो सकती है। इस रोग के लक्षण बौरों, पुष्पक्रमों की डंडियों, पत्तियों और फलों पर देखे जा सकते हैं। आमतौर पर इस रोग के लक्षण, सफेद कवक के रूप में देखे जाते हैं। इस रोग का फैलाव मुख्यत: हवा द्वारा होता है।

पौधा रोग विभाग, डॉ. कलाम कृषि महाविद्यालय, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, किशनगंज, बिहार

पत्तियों पर लक्षण

यह रोग मुख्य तौर पर नयी पत्तियों पर बहुत आसानी से दिखता है जब पत्तियों का रंग भूरे से हल्के रंग में परिवर्तित होता है। नयी पत्तियों पर ऊपरी और निचली सतह पर छोटे स्लेटी रंग के धब्बे दिखाई देते हैं जो निचले स्तर पर अधिक स्पष्ट होते हैं। बाद में ये धब्बे जामुनी रंग में परिवर्तित होने लगते हैं और इनका आकार भी बढ़ जाता है। अनुकुल वातावरण मिलने पर माईसीलियम कवक काफी मात्रा में दिखाई देते हैं।

रोग से ग्रसित पत्तियां टेढ़ी-मेढ़ी एवं मुड़ी हुई दिखाई देने लगती हैं। हाल ही में ऐसा देखा गया है की मैदानी इलाकों में पत्तियां इस रोग के लगने पर विकृत हो जाती हैं। पहाड़ी इलाकों में ये स्लेटी भूरे धब्बों और सफेद चूर्ण के साथ दिखायी देती हैं।

पुष्पक्रम पर रोग के लक्षण

आमतौर पर पुष्पक्रम (बौरों) पर पाउडरी मिल्ड्यू का लक्षण सबसे हानिकारक माना जाता है क्योंकि इससे आम के उत्पादन पर सीधा प्रभाव पड़ता है और अधिक हानि होती है। इसमें रोग के बीजाणु बौरों पर सफेद चूर्ण के रूप में दिखायी पड़ते हैं जो बौर में लगे फलों के झड़ने का मुख्य कारण बनते हैं। भीतरी के मुकाबले बाहरी आवरण इससे ज्यादा प्रभावित होते हैं। ग्रसित होने पर फूल खिलते नहीं हैं और समय से पहले गिर जाते हैं जिससे भारी नुकसान होता है।

रोग के लिए अनुकूल वातावरण

सुबह में गर्म तापमान, ओस और बादल वाला मौसम इस रोग के विकास के लिए अनुकूल होता है। न्यूनतम, इष्टतम

फलों पर लक्षण

चूर्णिल आसिता रोग के लक्षण नए फलों पर अधिक दिखते हैं। इसमें पूरी तरह सफेद चूर्ण का फैलाव होता है, जो फलों पर दिखाई देता है। इस रोग के अधिक बढ़ने पर फलों की ऊपरी सतह में फुटाव एवं वह खुरदरी हो जाती है। फलों पर बैंगनी भूरे धब्बे दिखाई पड़ने लगते हैं। मटर के दाने के बराबर होने के बाद फल पेड़ से गिरने लगते हैं जिससे उपज में भारी नुकसान होता है।

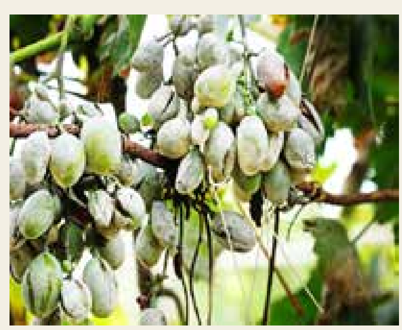

पत्तियों पर पाउडरी मिल्ड्यू रोग के लक्षण

और अधिकतम कोनिडिया अंकुरण के लिए तापमान क्रमश: 9, 22 और 30.5 डिग्री सेल्सियस होना चाहिए। उच्च आर्द्रता (81-100% आरएच) की तुलना में निम्न एवं मध्यवर्ती आर्द्रता (20-65% आरएच) बीजाणुओं के अधिकतम अंकुरण के लिए उत्कृष्ट होती है।

चूर्णिल फफूंद रोग का विकास मौसम की स्थिति जैसे उच्च सापेक्ष आर्द्रता (>80%) और न्यूनतम तापमान (>10° से.) से अत्यधिक प्रभावित होता है। उच्च सापेक्ष आर्द्रता और न्यूनतम तापमान 10° से. से ऊपर फूल आने के 80 घंटे तक की अवस्था में रहने से फफूंदी का संक्रमण बहुत जल्दी होता है।

रोग चक्र

यह कवक हवा के माध्यम से बहुत तेजी से फैलता है। वायुजनित कोनिडिया अंकुरण के बाद संक्रमण का कारण बनते हैं जिसमे लगभग 5-7 घंटे लगते हैं। जर्मट्यूब का विकास होता है और 5-7 घंटे के बाद उसमे माईसिलियम कवक बनना शुरू होता है। माईसिलियम एपिडर्मल कोशिकाओं पर बहुत अधिक फैलता है और कवक द्वारा कोशिकाओं को खाने से कोशिकाएं नष्ट और भूरी रंग की हो जाती हैं।

पुष्पक्रम पर रोग के लक्षण

एकीकृत रोग प्रबंधन

- बागों का नियमित निरीक्षण करें।
- रोगग्रस्त पत्तियाँ और विकृत पुष्पगुच्छ की छंटाई प्राथमिक इनोकुलम को कम कर देते हैं।
- बाग की साफ-सफाई के साथ एनपीके उर्वरक का प्रयोग रोग की उग्रता को कम करता है।
- इस रोग का सबसे अधिक प्रभाव पुष्पक्रमों पर होता है। अत: कवकनाशी के 3 छिड़काव बौर निकलने के समय में 15-20 दिनों के अन्तराल पर करने चाहिए।
- पहला छिड़काव फरवरी माह में विलयन सल्फर (0.2%) का घोल बनाकर पुष्पगुच्छ के दौरान करें जब पुष्पगुच्छ लगभग 10 मी. के हो जाएं तब कैराथेन नामक कवकनाशक का दूसरा छिड़काव करना चाहिए। यह पहले छिड़काव के 15-20 दिनों के बाद करना चाहिए।
- दूसरे छिड़काव के 15-20 दिनों बाद ट्राइडेमोर्फ (कैलिक्सिन) 0.1% का छिड़काव फूल खिलने से पहले करने पर रोग की आशंका को कम किया जा सकता है।
- संस्थान में हुए शोध में यह पाया गया है कि जब अधिकतम तापमान 35° से. तथा न्यूनतम 15-17° से. होता है तो रोग तेजी से फैलता है। यह भी पाया गया है कि आमतौर पर यह स्थिति मार्च माह के तीसरे या चौथे सप्ताह में होती है। इस प्रकार उपरोक्त छिड़काव को नियमानुसार इसी अवधि में करने से रोग को रोका जा सकता है।

संक्रमण के चौथे दिन, कई ऊर्ध्वाधर माईसिलियम से बॉडीज दिखाई देने लगते हैं जो कोनिडियोफोर्स होते हैं और ये पांच दिनों बाद कोनिडिया को जन्म देते हैं। इस प्रकार कोनिडिया से कोनिडिया तक का जीवन चक्र लगभग पाँच दिनों में पूरा होता है। कोनिडिया केवल चार से पांच दिनों तक ही अपनी जीवन शक्ति बनाए रखते हैं। बिना किसी नमी के धूप में रखने पर ये कोनिडिया चार से पांच घंटे के भीतर सिकुड़ जाते हैं। ■

बहुपयोगी पादप फोग का संरक्षण

उत्तम शिवरान, पुष्पा उज्जैनिया, एम आर चौधरी और **कमलेश कुमार यादव**

कैलिगोनम पॉलीगोनोइड्स जिसे स्थानीय रूप से फोग, फोगल्या या फोगड़ा के नाम से जाना जाता है। यह थार रेगिस्तानी इलाकों में पाई जाने वाली एक छोटी झाड़ी है। यह आमतौर पर 4 फीट से 6 फीट ऊँची होती है लेकिन कभी-कभी 1 से 2 फीट की परिधि के साथ 10 फीट की ऊँचाई तक पहुँच सकती है। इस पौधे को पुरानी अरबी कविता में ओर्टा के नाम से जाना जाता है। फोग मृदा संरक्षण में, शुष्क मेवे के रूप में, स्थानीय औषधि के रूप में तथा ग्रामीणों के लिए सांस्कृतिक महत्व के रूप में अत्यन्त उपयोगी है। यह पौधा आमतौर पर सूखी रेतीली मिट्टी और रेत के टीलों पर उगता है। यह बहुत ही कठोर किस्म के पौधों की श्रेणी में आता है और मिट्टी व नमी की प्रतिकूल परिस्थितियों में भी बढ़ने में सक्षम है। यह पौधा ठंड प्रतिरोधी है। इतने महत्व के बावजूद यह पौधा संकट की स्थिति से जूझ रहा है। इसका समय रहते संरक्षण अति आवश्यक है।

फोग की जड़ें बहुत गहरी होती हैं, जो रेगिस्तान में धोरों को बांधने का काम करती हैं। इसकी पत्तियां टूटकर जमीन पर गिरती हैं और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाती हैं।

रेगिस्तान की विषम परिस्थितियों में उगकर यह पौधा उस क्षेत्र के पर्यावरणीय संतुलन में अहम भूमिका निभाता है। पश्चिमी राजस्थान में ऊंट बड़ी मात्रा में पाए जाते हैं। अधिक तापमान और शुष्क भूमि होने के कारण यहां अधिक वनस्पतियां नहीं हो पाती। ऐसे में फोग ऊंटों के लिए उपयुक्त चारे का काम करता है।

फोग के फलों और फूलों में प्रोटीन अधिक होता है तथा प्रोटीन एवं कार्बोहाइड्रेट का अनुपात 1:5 होता है, जो ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है। फोग का पौधा अत्यंत सूखे और पाले दोनों ही परिस्थितियों में जीवित रह सकता है। इसकी यही खासियत ही इसे थार के अनुकूल बनाती है। पर्यावरणीय दृष्टि से इतना महत्वपूर्ण होने के बाद भी राजस्थान में धीरे-धीरे फोग की झाड़ियां लगातार खत्म होती जा रही हैं। फोग की लगातार कम होती संख्या के कारण आईयूसीएन ने इसे रेड डाटा बुक के संकटग्रस्त पादप की सूची में शामिल कर रखा है।

फोग के फलों में उच्च पोषण क्षमता वाले पोषक तत्व पाये जाते हैं। इसके कच्चे फलों में 18 प्रतिशत प्रोटीन, 71 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 9.1 प्रतिशत फाइबर रेशे, 0.7 मिग्रा. प्रति 100 ग्रा. विटामिन बी 2, 670 मिग्रा. प्रति 100 ग्रा. कैल्शियम, 420 मिग्रा. प्रति 100 ग्रा. फॉस्फोरस तथा 12.7 मिग्रा. प्रति 100 ग्रा. लौह तत्व पाये जाते हैं।

फोग के पौधों की जड़ों, कलियों, फूलों व बीजों में फ्लेविनोइडस, अल्केलोइडस, टेनिन, स्टेरोइडस और टरटेनोइडस आदि पाये जाते हैं। इसकी कलियों में एथिल होमोवनिलेट (11.79 प्रतिशत) तथा जड़ों में ड्रीमेंनोल (29.42 प्रतिशत) नामक वसीय तेल पाया जाता है।

लुप्तप्राय होने के कारण

फोग की जड़ें ईधन और कोयले की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, इसलिए इसकी जड़ों का अधिक दोहन किया जा रहा है। राजस्थान में लुहारों द्वारा सदियों से फोग की जड़ों से बने कोयले का उपयोग किया जाता है। इंदिरा गांधी नहर बनने के बाद पश्चिमी राजस्थान में कृषि गतिविधियों में तेजी से हो रहे विस्तार के कारण इसका असर फोग पर

मृदा कटाव को रोकने में कारगर

उद्यान विभाग, श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, एसकेएनएयू, जोबनेर

गुणकारी फोग

फोग फूल जिन्हें राजस्थानी में फोगालो के नाम से जाना जाता है, का उपयोग दही में मिलाकर रायता तैयार करने के लिए किया जाता है। यह रायता शरीर को ठंडक प्रदान करता है और लू के प्रभाव से बचाता है। पौधे के फूलों में पाचन और टॉनिक गुण होते हैं जो अस्थमा, खांसी और सर्दी के विरुद्ध उपयोगी होते हैं। इसके फूलों का प्रयोग आग से जलने पर दवा के रूप में किया जाता है। यह पौधा मवेशियों (पालतू पशुओं) खासतौर से ऊंट को खिलाया जाता है। यह अर्ध-रेगिस्तानी वन्यजीवों के आवास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसका उपयोग स्थानीय चिकित्सा में भी किया जाता है। लेटेक्स का उपयोग एक्जिमा के इलाज के लिए किया जाता है। इसकी कोमल पत्तियों के रस का उपयोग बिच्छू के डंक की दवा के रूप में एवं आंखों के स्वास्थ्य के लिए किया जाता है। इसके सत्व का उपयोग टाइफाइड ठीक करने के लिए करते हैं। इसकी जड़ों से बने चारकोल का उपयोग लोहे को पिघला कर औजार बनाने के लिए किया जाता है।

पशु आहार का सुगम स्त्रोत

संरक्षण

मरुक्षेत्र में फोग के पर्यावरणीय एवं औषधीय मूल्यों को समझते हुए इसका संरक्षण बेहद आवश्यक है। फोग को बचाने के लिए सर्वप्रथम थार रेगिस्तान के किसानों को खेती के अवांछित तरीकों से बचना होगा। उन्हें यह समझाना होगा कि खेती की जमीन तैयार करने के लिए फोग के पौधे को नष्ट करना जरूरी नहीं है। फोग के ईंधन के रूप में अत्यधिक दोहन को कम करने की आवश्यकता है। इसका वैकल्पिक स्रोत विलायती बबूल है। इस प्रकार, हम फोग का संरक्षण तो करेंगे ही साथ ही थार की जैवविविधता के लिए संकट बन रहे विलायती बबूल को भी खत्म करने में भी सहायता मिलेगी।

भी पड़ा और इसकी मात्रा रेगिस्तान में लगातार घटने लगी है। इसके विलुप्त होने के कारणों में अत्याधुनिक खेती के तरीकों को माना जा रहा है। आसानी से सभी जगह दिखने वाला यह पौधा अब नजर नहीं आता है। खेती में उपयोग किए जाने वाले ट्रैक्टर और अन्य साधनों से इसकी जड़ों को जमीन से निकाल फेंक दिया जाता है, वहीं दूसरी ओर किसानों द्वारा खेती हेतु जमीन तैयार करते समय भी इसकी जड़ों की खुदाई कर दी जाती है। फोग की झाड़ी बहुत धीमी गति से बढ़ती है।

एक झाड़ी तैयार होने में 7 से 8 वर्ष का समय लगता है, अत: जिस गति से फोग खत्म हो रहा है उस गति से वह उठ नहीं पा रहा है। विलायती बबूल ने भी थार रेगिस्तान की जैवविविधता को काफी हद तक प्रभावित किया है। इसका असर भी निश्चित तौर पर फोग पर पड़ा है।

प्रवर्धन: इसे आसानी से कटिंग और लेयरिंग द्वारा प्रसारित किया जाता है।

फोग की पत्तियों और पुष्पों के सेवन से बकरी के दूध उत्पादन क्षमता में अत्यधिक वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त गर्मी की तपती दोपहर में लू के दिनों में फोग के रायते को काचरे की सब्जी और बाजरे की रोटी से खाया जाता है। यह स्वास्थ्य की दृष्टि से बेहद लाभकारी होता है।

महत्व

अल्प बरसात वाले क्षेत्र और अधिक गर्मी वाले स्थानों के अनुकूल इस पौधे या झाड़ी का राजस्थान के लिए बहुत महत्व है। इस झाड़ीनुमा पौधे पर फरवरी-मार्च में पुष्प आते हैं और नई पत्तियों का अंकुरण होता है। इससे इसका महत्व गर्मी के मौसम में अधिक बढ़ जाता है। इसके निम्न महत्व इस प्रकार हैं :-

- इसकी जड़ों का जाल होता है जो मरूस्थल की आँधियों में मृदा कटाव को रोकते हैं।
- फोग की टहनियों का उपयोग खेत की बाड़ बनाने, पत्तियों का उपयोग चारे हेतु और जड़ें कोयले के रूप में उपयोग ली जाती हैं।
- इसकी पत्ती का लू, जड़ का गले की खराश और फूल का विष उतारने के रूप में औषधीय उपयोग होता है।
- इसका काढ़ा मसूड़ों की सूजन की दवा के रूप में उपयोग होता है।

खेत की बाड़ के रूप में उपयोगी फोग

नई सोच

पोषण वाटिका से स्वास्थ्य समृद्धि

मीनाक्षी तिवारी[1], **अनीता शुक्ला**[2], **निमिषा अवस्थी**[3] और **फूलकुमारी**[4]

पोषण वाटिका उस वाटिका को कहा जाता है, जो आंगन में ऐसी खुली जगह पर होती है जहां पारिवारिक श्रम से परिवार के उपयोग के लिए विभिन्न मौसमों में फल तथा सब्जियां उगाई जाती हैं। भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय पोषण अभियान के अंतर्गत महिलाओं और बच्चों के पोषण स्तर में सुधार के लिए सितंबर माह को राष्ट्रीय पोषण माह के रूप में मनाने का आह्वान किया गया। देश के सभी कृषि विज्ञान केंद्रों द्वारा आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं को पोषण थाली एवं पोषण वाटिका की महत्ता एवं स्थापना के लिए जागरूक करने के उद्देश्य से 17 सितम्बर को पोषण दिवस का आयोजन किया जाता है। इसी कारण इसे परिवार आधारित रसोई उद्यान अर्थात पोषण वाटिका या किचन गार्डन भी कहते हैं। हमारे आहार में फल एवं सब्जियों का महत्वपूर्ण स्थान है। इससे हमें विटामिन एवं खनिज लवणों के अतिरिक्त प्रोटीन एवं वसा प्राप्त होती है। इसमें से किसी की भी कमी होने से विभिन्न रोग हो सकते हैं। फल एवं सब्जी का संतुलित प्रयोग करके हम पोषक तत्वों की कमी द्वारा होने वाले रोगों से बच सकते हैं। भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद के अनुसार, प्रति दिन के हिसाब से एक व्यक्ति को 300 ग्राम सब्जियों का सेवन करना चाहिए। इसमें हरी पत्तेदार सब्जी 115 ग्राम, कंदवर्गीय सब्जी 115 ग्राम और अन्य दूसरी सब्जी की मात्रा 70 ग्राम होनी चाहिए। वर्तमान में भारत में प्रति व्यक्ति द्वारा 145 ग्राम सब्जी को ही खाया जा रहा है। इस कमी का मुख्य कारण मंहगाई, बाजार से दूरी एवं जागरूकता की कमी है।

आजकल सब्जियों में लगातार कीटनाशकों के प्रयोग से मानव शरीर में अनेक रोग हो रहे हैं तथा बढ़ते प्रदूषण एवं महंगी सब्जियों से बचने के लिए पोषण वाटिका आज की आवश्यकता बन गई है।

पोषण वाटिका को बढ़ावा देकर हर मनुष्य की पोषण सुरक्षा व खर्च में कमी कर स्वरोजगार के अवसर भी बढ़ा सकते हैं। अपने घर पर ही अपशिष्ट पदार्थों का उपयोग करके ताजा जैविक सब्जियाँ उत्पादित करने के साथ-साथ वातावरण को भी स्वच्छ रख सकते हैं।

बच्चों को बेहतर संतुलित आहार प्रदान करने हेतु केंद्र एवं राज्य सरकार के प्रयासों से विद्यालयों में पोषण वाटिका विकसित की जा रही है। इससे प्रतिदिन मिड-डे मील के आहार के साथ बच्चों को ताजा एवं पोषक सब्जियां परोसी जा रही हैं।

[1]वैज्ञानिक (गृह विज्ञान), कृषि विज्ञान केंद्र, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, डेडियापाड़ा, गुजरात; [2]विषय वस्तु विशेषज्ञ, (गृह विज्ञान) केवीके खरगौन, जेड.ऐ.आर.एस., खंडवा रोड, म.प्र.; [3]विषय वस्तु विशेषज्ञ, (गृह विज्ञान) केवीके कानपुर देहात, च.शे.आ.कृ. एवं प्रौ. विश्वविद्यालय, कानपुर, उ.प्र.; [4]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख (गृह विज्ञान), केवीके दीमापुर, अरुणाचल प्रदेश

पोषण वाटिका की आवश्यकता

- पोषक तत्वों से युक्त सब्जियों की उपलब्धता के लिए।
- सब्जियों के लगातार बढ़ते मूल्य से बचने के लिए।
- बाजार दूरी से समय खर्च को बचाने के लिए।
- दैनिक आहार में विविधता के लिए।
- घर के पास हरियाली से पर्यावरण सुरक्षा के लिए।

स्थान चयन

पोषण वाटिका के लिए ऐसी जगह का चयन करे जहां भरपूर मात्रा में धूप आती हो। एक या दो कम्पोस्ट के गड्ढे बड़े पेड़ की छाया या कम महत्व वाली जगह में बनाने चाहिए। अगर पर्याप्त जगह हो तो पपीता, नीबू, अमरूद इत्यादि को उत्तर दिशा में लगाया जा सकता है। एक पांच सदस्य वाले औसतन परिवार को वर्षभर की सब्जियों की जरूरत को पूरा करने के लिए 200 से 250 वर्ग मीटर की भूमि काफी है। इसमें छोटी-छोटी क्यारियां बनाकर उसमें जरूरत के अनुसार सब्जियां उगाई जा सकती हैं।

बड़े शहरों में जगह के अभाव के कारण लोग अपने इस शौक को घर की छत पर गमलों या पॉली बैग में या हाइड्रोपोनिक्स तकनीक से भी पोषण वाटिका लगाकर ताजा सब्जियां उत्पादित कर सकते हैं परन्तु छत के वातावरण का तापमान एवं नमी उपयुक्त रखने के उपाय अवश्य करें।

पोषण वाटिका पर प्रशिक्षण कार्यक्रम

बीज एवं पौध की तैयारी

पोषण वाटिका में फसल चक्र के अनुसार निश्चित समय पर ही बीज अथवा पौध को लगाएं। बीज किसी विश्वसनीय स्त्रोत से ही खरीदें। जिन सब्जियों की पौध लगाई जाती हो उनकी पौध नजदीकी नर्सरी से खरीदें या प्रो ट्रे नर्सरी तकनीक से स्वयं ही बनायें।

लाभ

स्वास्थ्यः पोषण वाटिका से शुद्ध हवा, प्रोटीन, खनिज एवं विटामिनों से युक्त फल, फूल एवं सब्जियां प्राप्त होती हैं। इसके साथ ही बगीचे में कार्य करने से शारीरिक व्यायाम भी होता है, जिससे परिवार के सदस्य स्वस्थ एवं प्रसन्न रहते हैं।

समृद्धिः एक परिवार में औसतन प्रति दिन 50 से 100 रुपए की सब्जी एवं फल बाजार से खरीदे जाते हैं। इस स्थिति में पोषण वाटिका द्वारा प्रति माह 1500-3000 रुपए की बचत कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त यदि फलदार पौधे जैसे- नीबू, पपीता, आम एवं अमरूद आदि भी बगीचे में लगे हों, तो फलों के लिए खर्च होने वाले बजट की भी बचत की जा सकती है। इससे परिवार का आहार संबंधी बजट कम कर सकेंगे और आर्थिक बचत में भी सहायता मिलेगी।

बुद्धिमत्ताः स्वयं की मेहनत से उपजी हरी-भरी ताजा सब्जियों को देखकर सभी का तन-मन प्रसन्न होगा। इसके अतिरिक्त सब्जियां खरीदने के लिए बाजार में जाने का बहुमूल्य समय भी बच जाता है। इस प्रकार पोषण वाटिका स्थापित करना परिवार के स्वास्थ्य एवं समृद्धि के लिए बुद्धिमत्तापूर्ण कदम साबित होगा।

महिलाओं द्वारा वाटिका का रखरखाव

प्रो ट्रे प्लास्टिक की बनी हुई ट्रे होती हैं इनमें सांचेनुमा छोटे-छोटे कक्ष होते हैं। इन कक्षों में बीज डालकर ट्रे को नियंत्रित वातावरण में रखकर पौध तैयार की जाती है। टमाटर, बैंगन एवं सभी कद्दूवर्गीय सब्जियों के लिए 18-20 घन सें.मी. आकार के लिए खांचे वाली प्रो ट्रे का प्रयोग किया जाता है। प्रो ट्रे में तैयार पौध कई मायनों में खेत में तैयार पौध से बेहतर होती है।

सस्ते एवं आसानी से उपलब्ध माध्यम के रूप में प्रो ट्रे में 9 भाग वर्मीकम्पोस्ट एवं 1 भाग रेत मिलाकर भी प्रो ट्रे में भरा जा सकता है। इस माध्यम में पौध गलन की समस्या नहीं होती परन्तु सिंचाई का ध्यान आवश्यक है।

माध्यम द्वारा भरी हुई प्रो ट्रे के प्रत्येक खांचे में उंगली से हल्के गड्ढे बनाकर प्रत्येक गड्ढे में उन्नत किस्म के उपचारित बीजों की बुआई करते हैं। इसके बाद प्रो ट्रे पर एक पतली परत के रूप में मृदा रहित माध्यम डाला जाता है जिससे बीज खुले न रहें। तत्पश्चात प्रो ट्रे को उचित स्थान पर या स्टैंड पर रखकर झारे की सहायता से हल्का पानी छिड़कें।

महिला सशक्तिकरण में अहम पोषण वाटिका

भूमि की तैयारी

अच्छी फसल के लिए अच्छी जुताई एवं भूमि की तैयारी आवश्यक है। पोषण वाटिका के लिए शुरू में ही पूरी जमीन की गहरी जुताई कर दें। मिट्टी से कंकड़-पत्थर एवं खरपतवार भली प्रकार से निकाल दें। इसके बाद क्यारियाँ बनाकर नंबर दें। क्यारियों में कम्पोस्ट अथवा गोबर की सड़ी खाद का भरपूर प्रयोग करें। अगर भूमि में दीमक का प्रकोप हो तो नीम खली का प्रयोग करें।

सिंचाईः पोषण वाटिका में क्यारियों की सिंचाई समय-समय पर जरूरत के अनुसार करनी चाहिए क्योंकि तेजी से बढ़ने वाली सब्जी फसलों की नियमित सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

क्यारियों की निराईः गुड़ाई करते रहने से खरपतवार को नष्ट किया जा सकेगा तथा पौधों को अधिक पोषक तत्व उपलब्ध होते रहेंगे। सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई से क्यारियों में नमी बनी रहती है। जड़ों में वायु का संचार अच्छा होता है पौधे स्वस्थ रहते हैं तथा सिंचाई की जरूरत कम होती है।

पोषण वाटिका के लिए पौध सुरक्षा

बीजों और पौधों की खरीददारी

सब्जियों का वर्गीकरण

गर्मी की सब्जियाँः इनमें भिंडी, लोबिया, ग्वार, टमाटर, बैंगन, मिर्च, शिमला मिर्च एवं कद्दूवर्गीय सब्जियां के प्रमुख हैं। ये फरवरी-मार्च में बोयी जाती हैं।

वर्षाकालीन सब्जियाँः इनमें जायद में उगाई जाने वाली सब्जियों के साथ अरबी, हल्दी, अदरक, शकरकंद अगेती रबी की सब्जियां प्रमुख हैं। ये आमतौर पर जून-जुलाई में बोयी जाती हैं।

शरद ऋतु की सब्जियाँः इनमें गोभी वर्गीय सब्जियाँ, गाजर, मूली, पालक, मेथी, मटर, चुकंदर, प्याज, लहसुन, आलू आदि प्रमुख हैं। ये अक्टूबर-नवम्बर में बोयी जाती हैं।

जैविक सब्जी उत्पादन

पौध सुरक्षा के लिए उन्नत तकनीक का उपयोग

विश्वसनीय संस्थानों से ही करनी चाहिए। गोबर की खाद का ही ज्यादातर प्रयोग करना चाहिए। कीट एवं रोगों का प्रकोप कम करने के लिए सब्जियों को क्यारियों में बदल-बदल कर बोयें, साथ ही पोषण वाटिका में कुछ क्यारियां खाली छोड़ें। बुआई से पहले क्यारी को खोदें ताकि क्यारी धूप में तप जाये एवं कीट एवं रोगों के कारक नष्ट हो जायें। कीटों और रोगों से बचाने के लिए जैविक कीटनाशी दवाइयों का उपयोग करें।

पोषण वाटिका में फसलचक्र

पोषण सुरक्षा के लिए पोषण वाटिका में फसलचक्र अपनाना आवश्यक है। फसलचक्र अपनाकर वर्ष भर सब्जी एवं फल ले सकते हैं। फसलचक्र के लिए पोषण वाटिका की प्रत्येक क्यारी एवं मेड़ का क्रमांक निश्चित कर देते हैं कि कौन-सी सब्जी किस क्यारी में किस माह में लगानी है। फसलों एवं किस्मों का चयन जलवायु एवं व्यक्तिगत पसन्द के अनुसार करते हैं। क्यारियों की मेड़ों पर गोभी, मूली, गाजर, फूलगोभी, शलजम, चुकंदर तथा सलाद लगाते हैं। पोषण वाटिका के चारों तरफ करेला, खीरा, तोरई, सेम या कुंदरू लगा सकते हैं। कम्पोस्ट के गड्ढे पोषण वाटिका के पश्चिम किनारे पर बनायें। गड्ढे के ऊपर मचान बनाकर उस पर कद्दू, कुंदरू, सेम इत्यादि लगायें। अतः सब्जी फसलचक्र में गहरी जड़ वाली सब्जियों के उपरांत उथली जड़वाली सब्जियाँ ही लगानी चाहिए। इसी प्रकार मूली के उपरांत दहलनी फसल उगानी चाहिए जो भूमि में नाइट्रोजन एकत्र करेगी। उदाहरण के लिए गाजर के उपरांत मटर लगायें। पोषण वाटिका में इस बात का विशेष ध्यान रखें कि फल वृक्ष उत्तर एवं पश्चिम की तरफ ही लगाए जाएं। मध्यम आकार वाले वृक्ष उत्तर की ओर एवं छोटे आकार वाले वृक्ष पश्चिम की ओर लगाएं। पोषण वाटिका को चारों ओर से कंटीले तार से घेर देना चाहिए। घेरे के ऊपर लता वाली सब्जियाँ लगायी जा सकती हैं। रास्ता एवं सिंचाई की नाली इस प्रकार बनायें कि पूरी पोषण वाटिका का कार्य आसानी से हो सके।

नीम पत्ती का घोल

नीम की 10-12 कि.ग्रा. पत्तियां, 200 लीटर पानी में 4 दिनों तक भिगोएं। पानी हरा पीला होने पर इसे छानकर, प्रति एकड़ की दर से फसल पर छिड़काव करने से इल्ली की रोकथाम होती है। इस औषधि की तीव्रता को बढ़ाने हेतु बेसर, धतूरा, तम्बाकू आदि के पत्तों को मिलाकर काढ़ा तैयार कर सकते हैं और यह दवा कई प्रकार के कीटों को नष्ट करने में उपयोगी है।

नीम की निबोली

नीम की 2 किलो निबोली को महीन पीस लें। इसमें 2 लीटर ताजा गौमूत्र मिला लें। इसमें 10 किलो छाछ मिलाकर 4 दिनों तक रखें और 200 लीटर पानी मिलाकर प्रति एकड़ की दर से फसल पर छिड़काव करें।

नीम की खली

इसका उपयोग भूमि में दीमक तथा व्हाइट ग्रब एवं अन्य कीटों की इल्लियां तथा प्यूपा को नष्ट करने तथा मृदाजनित रोग विल्ट आदि की रोकथाम के लिये किया जा सकता है। इसे 6-8 क्विंटल प्रति एकड़ की दर से अंतिम बखरनी करते समय बारीक कूटकर खेत में मिलाएं।

पीले रंग के स्टिकी ट्रैप

पीले रंग के स्टिकी ट्रैप या चिपचपे जाल आमतौर पर सफेद मक्खी, एफिड्स, थ्रिप्स जैसे उड़ने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए उपयोग किए जाते हैं। चूंकि अक्सर कीट पीले रंग के फूल पर मौजूद परागकणों को खाने के लिए उनकी ओर खींचे चले जाते हैं। यही कारण है कि कुछ कीट पीले रंग की ओर आकर्षित होते हैं, और पीले रंग के स्टिकी ट्रैप का उपयोग सब्जियों, फलों आदि पौधों में कीट नियंत्रण के लिए कर सकते हैं।

भाकृअनुप की मासिक लोकप्रिय पत्रिका
'खेती' मई, 2025 अंक के प्रमुख आकर्षण

- कृषि क्षेत्रों के लिए लाभकारी सौर ऊर्जा योजनाएं
- बकरियों के लिए पौष्टिक चारा है अजोला
- सजावटी मछलियों का पालन
- हरी खाद से बढ़ाएं फसलोत्पादन
- अरहर का पर्वतीय क्षेत्रों में सफल उत्पादन
- सरसों का जैविक उत्पादन
- गंगा नदी की कार्प मछलियों का पुनरुद्धार
- राजस्थान का मत्स्य उत्पादन विकास की ओर
- किसानों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव का समाधान
- डेरी पशुओं में ऊष्मीय तनाव
- भण्डारित अनाज में कीटों द्वारा नुकसान का प्रबंधन
- मृदा स्वास्थ्य पर कृषि वानिकी प्रणाली का प्रभाव

संपर्क सूत्रः प्रभारी, व्यवसाय एकक, भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, कैब-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाषः 25843657, www.icar.org.in

शीतोष्ण फसलों में कुरमुला कीट का प्रबंधन

सुमन साँजटा[1], **उर्वी शर्मा**[2], **शर्मिष्ठा ठाकुर**[1] और **कुलदीप सिंह वर्मा**[1]

कुरमुला कीट एक बहुभक्षी कीट है जो विभिन्न प्रकार की शीतोष्ण फसलों में क्षति पहुंचाता है। इस कीट की अविकसित तथा विकसित, दोनों ही अवस्थाएं शीतोष्ण फल फसलों में नुकसानदायक होती हैं, इसलिए यह इन फसलों का एक हानिकारक कीट है। समेकित प्रबंधन से इसका नियंत्रण प्रभावशाली तरीके से किया जा सकता है। भारत में शीतोष्ण फल फसलों जैसे सेब, नाशपाती, आडू, अखरोट, पिकन नट और चेरी का उत्पादन बढ़ रहा है, लेकिन इन फसलों पर कुरमुला कीट का प्रकोप एक गंभीर समस्या बन गई है। भारत में कुरमुला कीट की 1000 से अधिक प्रजातियां ज्ञात हैं, जिनमें से 40 से अधिक प्रजातियां पौधों की विस्तृत श्रृंखला पर आक्रमण करती हैं। कुरमुला कीट, जो विभिन्न बीटल प्रजातियों के लार्वा होते हैं, पौधों की जड़ों पर संक्रमण करके फसलों को बहुत नुकसान पहुँचाते हैं। इन कीटों के कारण न केवल उपज में कमी आती है, बल्कि फलों की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। यह समस्या विशेष रूप से उन क्षेत्रों में गंभीर है जहां शीतलमय फसलें उगाई जाती हैं।

कुरमुला कीट, स्कैरेबिडे परिवार के होते हैं ये आमतौर पर ब्राह्मिना, होलोट्राईकिआ, अनोमैला, और ल्यूकोफोलिस जैसी प्रजातियों से संबंधित होते हैं। ये कीट सफेद एवं सी-आकार के होते हैं और आकार में लगभग 2 से 4 सें.मी. तक बढ़ सकते हैं।

इनका जीवनचक्र लगभग एक वर्ष का होता है। मानसून के मौसम में (जून से अगस्त के बीच), वयस्क मादा भृंग जमीन में अंडे देती हैं। इन अंडों से ग्रब निकलते हैं जो जड़ों को खाते हैं। ग्रब जमीन में ही रहते हैं और अपना अधिकतर समय जमीन के अंदर ही व्यतीत करते हैं। ग्रब तीन अवस्थाओं से गुजरकर जमीन में ही रहते हैं, और फिर वयस्क भृंग मानसून की पहली बौछार के साथ जमीन में से निकलते हैं।

[1]कीट विज्ञान विभाग, चौधरी सरवण कुमार कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर, (हि.प्र.)-176062; [2]पंजाब एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, कृषि विज्ञान केंद्र, रोपड़, (पंजाब)-140001

फसलों पर प्रभाव

कुरमुला कीट का मुख्य प्रभाव फसलों की जड़ों पर पड़ता है, इससे पौधों की वृद्धि और उपज पर नकारात्मक असर पड़ता है।

जड़ों का नुकसानः ये कीट अपने मजबूत दांतों की सहायता से जड़ों को कुतरकर नष्ट कर देते हैं। इससे पौधे कमजोर हो जाते हैं। जड़ों के कमजोर होने से पौधों को

सेब खाती हुई भृंग

आवश्यक जल और पोषक तत्व प्राप्त नहीं हो पाते, जिससे पौधों का विकास रुक जाता है। इसके परिणामस्वरूप पौधों में मुरझाना, वृद्धि में कमी और अंततः पौधों की मृत्यु भी हो सकती है।

प्रबंधन

भारत में शीतोष्ण फल फसलों पर कुरमुला कीट का प्रभाव एक गंभीर चुनौती है, यह किसानों के लिए आर्थिक और कृषि उत्पादकता के लिए संकट उत्पन्न करता है। इस समस्या से निपटने के लिए वैज्ञानिक तरीके और समय पर नियंत्रण के उपायों का पालन किया जाना चाहिए। एक संतुलित दृष्टिकोण, जिसमें सांस्कृतिक, जैविक और रासायनिक नियंत्रण विधियाँ शामिल हों, किसानों को इस संकट से बचने में मदद कर सकती हैं और शीतोष्ण फल फसलों की उपज को बेहतर बना सकती हैं।

प्रकाश प्रपंच

उपज और फल की गुणवत्ता में कमी: भृंग पौधों की पत्तियों को खाकर पत्तीविहीन कर देते हैं, उनमें फल उत्पन्न होने की क्षमता कम हो जाती है। जो फल होते हैं, वे आकार में छोटे, अपरिपक्व और खराब गुणवत्ता के होते हैं। इसके अलावा, फल जल्दी खराब भी हो सकते हैं। कुरमुला कीट की कुछ प्रजातियां फलों को भी खाती हैं जिससे किसानों और फल उत्पादकों को आर्थिक नुकसान होता है।

अन्य कीट एवं रोग: कुरमुला कीट से कमजोर हुए पौधे अन्य कीटों और रोगों के लिए अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। इससे संक्रमण की आशंका बढ़ जाती है, और नुकसान बढ़ सकता है।

नियंत्रण

कुरमुला कीट के प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए एक समग्र और प्रभावी दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। इसके लिए कई नियंत्रण विधियाँ अपनाई जा सकती हैं:

पारंपरिक विधि: कुरमुला कीट की संख्या को कम करने के लिए खेतों में उचित जल निकासी और फसल चक्रीकरण महत्वपूर्ण है। इसके अलावा, खेतों की सफाई रखना और समय पर सिंचाई करना भी लाभकारी हो सकता है।

यांत्रिक/भौतिक विधि: इस विधि में पौधों से कीटों की व्यस्क अवस्था को वृक्षों से झाड़कर जमीन पर सफेद कपड़े में एकत्रित कर उन्हें नष्ट कर सकते हैं। इस कीट के व्यस्क शाम के समय सक्रिय होते हैं और रोशनी की तरफ आकर्षित होते हैं, इसलिए उन्हें प्रकाश प्रपंच के उपयोग से पकड़कर नष्ट किया जा सकता है।

सेब के वृक्ष की जड़ पर कीट का प्रकोप

जैविक नियंत्रण: जैविक विधियों में कीटों के प्रबंधन के लिए परजीवी व परभक्षी जीवों का उपयोग किया जाता है जो कुरमुला कीट का भक्षण करते हैं, तथा फसलों को किसी तरह से नुकसान नहीं पहुंचाते। रोगजनक फफूंद जैसे *मेटाराईजियम एनीसोप्ली* तथा *ब्यूवेरिया बेसियाना* का इस्तेमाल कर सकते हैं। रोगजनक सूत्रकृमि जैसे *हैटरोरेहबडाइटिस बैकटीरिओफोरा* एवं *स्टैनेरनेमा कारपोकॉप्सी* भी कुरमुला कीट की रोकथाम के लिए काफी प्रभावशाली है। जैविक नियंत्रण के लिए जमीन में पर्याप्त नमी होनी चाहिए ।

रासायनिक नियंत्रण: यदि कुरमुला कीट का प्रकोप अधिक हो, तो रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग किया जा सकता है। हालांकि, इस तरीके का इस्तेमाल सावधानी से करना चाहिए, क्योंकि यह पर्यावरण और अन्य कीटों पर भी प्रभाव डाल सकता है।

मई-जून माह के बागवानी कार्य

हरे कृष्ण[1], नृपेन्द्र विक्रम सिंह[3], अरविंद कुमार सिंह[2] और शुभम कुमार तिवारी[1]

भारत में मई-जून (ज्येष्ठ-आषाढ़) का समय फल उत्पादन के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि यह ग्रीष्म का चरम और मानसून के आगमन का समय होता है। इस अवधि में ऋतु परिवर्तन फलों के पकने, तोड़ने और बागों के प्रबंधन पर सीधा प्रभाव डालते हैं। मई में गर्मी अपने चरम पर होती है और तापमान विशेषकर उत्तरी और मध्य भारत में 40 डिग्री सेल्सियस से ऊपर चला जाता है। इस तेज गर्मी और लंबे दिनों की वजह से आम, लीची, पपीता, चीकू और अंगूर जैसे फल पक जाते हैं और इन्हें तोड़कर बाजार में भेजने की व्यवस्था करनी होती है। विशेषकर आम की फसल इस समय देश के कई भागों जैसे उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र में तैयार होती है। अनार की खेती में भी मई-जून का विशेष महत्व है, विशेषकर उत्तर-पश्चिमी शुष्क क्षेत्रों में जहां मृग बहार को प्राथमिकता दी जाती है। बेर और खजूर जैसे फलों में इस समय कटाई-छंटाई और फलों को विरलीकरण करने का काम होता है ताकि बाद में फल अच्छे आकार और गुणवत्ता के हों। सेब, नाशपाती, आड़ू और आलूबुखारा जैसे शीतोष्ण फलों में फल लगने और बढ़ने प्रारम्भ हो जाते हैं। नए बगीचे लगाने की तैयारी भी इसी समय होती है क्योंकि मानसून आने वाला होता है। गड्ढे खोदकर उनमें खाद और मिट्टी डाली जाती है ताकि वर्षा में पौधे रोपित किए जा सकें। नर्सरी में छोटे पौधों को गर्मी से बचाने के लिए छप्पर डाले जाते हैं और हर सप्ताह पानी दिया जाता है ताकि वे मानसून में बगीचे में रोपने के लिए तैयार हो जाएं।

मौसम की बात करें तो 21 जून को ग्रीष्म संक्रांति होती है, जो साल का सबसे लंबा दिन होता है और सूर्य कर्क रेखा के ठीक ऊपर होता है।

[1]भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-221005; [2]केंद्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र, (केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान), वेजलपुर (गोधरा), गुजरात-389340; [3]भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा कैंपस, नई दिल्ली-110012

पूर्वी और पश्चिमी तटों पर मई-जून में मानसून से पहले की बौछारें पड़ती हैं, जिन्हें मैंगो शावर कहते हैं, जो आम के फलन में लाभकारी होती हैं। इसी प्रकार, पश्चिम बंगाल, असम, झारखंड और बिहार में तेज हवाओं और गड़गड़ाहट के साथ काल बैसाखी नाम की भारी वर्षा होती है, जो आम और लीची के लिए लाभदायक होती है। उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों में गर्म हवाएँ यानी लू चलती है, जिससे छोटे पौधों और नए बगीचों को घास या पुआल से ढककर बचाना पड़ता है।

जून के अंत तक दक्षिण और पश्चिमी भारत से मानसून प्रारम्भ हो जाता है और धीरे-धीरे उत्तर की ओर बढ़ता है। यह बदलाव फलों की बढ़ोतरी और नए पौधों की जड़ें जमाने के लिए आवश्यक होता है। गर्मी के कारण फल शीघ्र पकते हैं, लेकिन अगर पानी कम हो तो फल छोटे रह सकते हैं।

जून में नमी और वर्षा के कारण फल बेधक कीट और फफूंदजनित रोग बढ़ते हैं, इसलिए रासायनिक छिड़काव या फलों को थैलियों से ढकना पड़ता है।

मई-जून में मिट्टी का सौरीकरण किया जाता है जिससे कीट, फफूंद और खरपतवार के बीज नष्ट हो जाएं। कुल मिलाकर, मई-जून का समय भारतीय फल खेती के लिए एक ऐसा दौर होता है जिसमें गर्मी में चुनौतियों और वर्षा के अवसरों को संतुलित करना पड़ता है, जिससे फलोत्पादन की सफलता तय होती है।

आम

मानसून के आगमन से पूर्व, मई माह में नए बाग लगाने के लिए उचित दूरी पर बाग के रेखांकन (निशान लगाने) के बाद गड्ढे खोदने का कार्य पूर्ण कर लेना चाहिए। शुष्क क्षेत्रों, जहां पौधों की पर्याप्त वानस्पतिक वृद्धि नहीं होती, वहाँ पौधों के बीच 10×10 मीटर की दूरी रखें, जबकि अधिक वर्षा और समृद्ध मृदा वाले क्षेत्रों में, जहाँ प्रचुर वानस्पतिक विकास होता है, पौधों के बीच 12×12 मीटर की दूरी रखें। संकर एवं बौनी किस्मों, जैसे आम्रपाली को 5×5 मीटर की दूरी पर भी लगाया जा सकता है।

नर्सरी में बीजू पौधों की आवश्यकतानुसार सिंचाई करें और खरपतवार निकालें। पकते हुए फलों को पक्षियों आदि से सुरक्षित रखें। फलों की आंतरिक सड़न रोकने के लिए बोरेक्स (4 कि.ग्रा./100 लीटर) का छिड़काव करें।

फल मक्खी के प्रकोप से बचाव हेतु मिथाइल यूजीनॉल (0.1 प्रतिशत) एवं मैलथियॉन (0.1 प्रतिशत) के रासायनिक पाश का उपयोग करें। कैंकर रोग से बचाव के लिए स्ट्रेप्टोमाइसिन (200 पीपीएम) का छिड़काव करें। फलों की अच्छी वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए आवश्यकतानुसार 7-10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

जून में नीचे गिरे फलों को इकट्ठा करके उन्हें स्थानीय बाजारों में भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए। वृक्षों के नीचे की जमीन साफ-सुथरी रखें और यदि अगेती किस्म के फल पक गए हों तो उन्हें तोड़कर बाजार भेजने की उचित व्यवस्था करें।

फलों की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए तुड़ाई के तुरंत बाद डीसैपिंग (डंठल से निकलने वाले स्राव को हटाना) आवश्यक है। फलों की तुड़ाई प्रातः या सायंकाल में करें और प्रत्येक फल को 10 मिमी. की शाखा के साथ तोड़ें।

बौनी किस्मों की तुड़ाई के लिए सिकेटियर तथा ओजस्वी किस्मों के लिए 'मैंगो हार्वेस्टर' का उपयोग करें। तुड़ाई के दौरान विभिन्न किस्मों के फलों को आपस में मिश्रित न करें और किस्मवार श्रेणीकरण करें ताकि बाजार में उचित मूल्य प्राप्त हो सके।

फलों को उनके वजन के आधार पर निम्न श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है: 'ए' श्रेणी: 100-200 ग्राम, 'बी' श्रेणी: 201-350 ग्राम, 'सी' श्रेणी: 351-550 ग्राम और 'डी' श्रेणी: 551-800 ग्राम।

अमरूद

अप्रैल-मई के महीने फल के विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि गर्मियों में आमतौर पर वातावरण निरंतर शुष्क होता जाता है, जिससे मृदा में पानी की कमी होने लगती है। अतः उचित समय पर सिंचाई नहीं होने पर फलों की वृद्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है जिसके परिणामस्वरूप वो छोटे रह सकते हैं। इसलिए 8-10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई पर दी जानी चाहिए।

मई माह में, यदि बगीचों में फल मक्खी अथवा अन्य कीटों का प्रकोप हो तो क्विनाल्फॉस 25 ईसी का 2 मि०ली० प्रति लीटर या मैलाथियॉन 50 ईसी का 1 मि०ली० प्रति लीटर या मोनोक्रोटोफॉस 36 डबल्यूएससी 2 मि०ली० प्रति लीटर की दर से या 3 प्रतिशत नीम के तेल का छिड़काव करें। छिड़काव प्रातःकाल या देर शाम में 21 दिनों के अंतराल पर कम से कम चार बार किया जाना चाहिए।

जून माह में नए अमरूद के बागों की स्थापना के लिए, खेत को भली-भांति तैयार करें। इसके लिए मई माह में मोल्ड बोर्ड प्लाऊ से ग्रीष्मकालीन जुताई दो बार कर भूमि को समतल करें। गड्ढे खोदने के लिए सरेखण और खूंटी अंकन कर कतारों और पौधों के बीच में दूरी 3-6 मीटर (सामान्य रोपण अथवा सघन रोपण के अनुसार) रखनी चाहिए। गड्ढों का आकार 60×60×60 सें.मी. होना चाहिए। गड्ढा खोदते समय खोदी गई ऊपरी मिट्टी (डेढ़ फीट) को गड्ढे के दाहिनी ओर और नीचे की मिट्टी (डेढ़ फीट) को गड्ढे के बाईं ओर रखें।

मृदाजनित कीटों और व्याधियों को नियंत्रित करने के लिए भरने से पहले गड्ढे को कम से कम दो सप्ताह तक धूप में रहने दें। जून माह में प्रत्येक गड्ढे को 10 किलो गोबर की सड़ी खाद, 1 किलो नीम की खली, 50 ग्राम क्लोरोपाइरीफॉस को ऊपरी मिट्टी के साथ मिलाकर भरा जाना चाहिए। गड्ढों को भूमि से कम से कम 6 इंच ऊपर मिट्टी से भरें ताकि जब मिट्टी बैठ जाए तो वह रोपण के समय जमीन के स्तर पर रहे।

नए बागों में मानसून के प्रारम्भ के साथ किसान अंतर-सस्य फसलें बो सकते हैं। पौधों में जिंक की कमी हो जाने पर पत्तियां छोटी एवं पीली लगती हैं। इसके नियंत्रण के लिए आधा किलो जिंक सल्फेट और आधा किलो बुझे हुए चूने के घोल 100 लीटर पानी में बनाकर इसका छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार करना चाहिए।

तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

तुड़ाई के बाद होने वाले रोगों को रोकने और फलों को समान रूप से पकाने के लिए कार्बेण्डाजिम (0.5 ग्राम प्रति लीटर) और ईथरेल (700 पीपीएम) के घोल को 5-21 डिग्री सेल्सियस गुनगुने पानी में तैयार कर फलों को 5 मिनट तक उपचारित करें। विपणन एवं निर्यात हेतु पैकेजिंग के लिए प्रत्येक आम को स्वच्छ, सफेद, कोमल, विस्तार-योग्य और जालीदार पॉलीस्टाइरीन की तह में लपेटकर पैक करें। बंगनपल्ली आम के लिए पैकेज बॉक्स का आकार 390×260×115 मि.मी. होना चाहिए। दशहरी आम के लिए 5 प्रतिशत वातायनयुक्त नालीदार फाइबर बोर्ड बॉक्स 320×230×90 मि.मी. का उपयोग करें।

केला

मई माह में प्रत्येक सप्ताह के अंतराल पर सिंचाई अवश्य करें। अवांछित पत्तियों को हटा दें और फलों के गुच्छों को धूप से बचाने के लिए पत्तियों से ढक दें। नए बाग लगाने के लिए रेखांकन के बाद 45×45 ×45 सें.मी. आकार के गड्ढे खोदें। जून के

अंगूर

नई बेलों में सिंचाई 10-15 दिनों के अंतराल पर करते रहना चाहिए। मई के अंत तक परलेट और ब्यूटी सीडलैस किस्मों के तैयार गुच्छों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए और जब किस्में पकने लगें तो सिंचाई बंद कर देनी चाहिए, अन्यथा फलों में ठोस घुलनशील पदार्थों की अत्यधिक कमी आ जाती है और फल फटने लगते हैं, इससे उन्हें बाजार में बेचना कठिन हो जाता है। यदि एन्थ्राक्नोज (श्याम व्रण) का प्रकोप हो तो बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव एक सप्ताह के अंतराल पर दो बार करना चाहिए। चूर्णिल फफूंद की रोकथाम के लिए केराथेन (0.1 प्रतिशत), डीनोकैप (0.25 मिली/लीटर) के घोल का छिड़काव करना चाहिए या सल्फर का प्रयोग करना चाहिए। इन महीनों में कहीं-कहीं थ्रिप्स का भी प्रकोप रहता है, जिसे नियंत्रित करने के लिए इमामेक्टिन बेंजोएट 5 एसजी (0.22 ग्राम प्रति लीटर पानी) या स्पिनोसैड 45 एससी (0.25 मिली प्रति लीटर) का छिड़काव करना चाहिए। जून माह में मृदुल आसिता से बचाव के लिए मुख्य तने के समीप से निकलने वाली सभी शाखाओं को हटा देना चाहिए और ट्रेलिस से लटकने वाली अतिरिक्त शाखाओं को सुतली से बांध देना चाहिए ताकि वे मिट्टी के संपर्क में न आएं। इसके अतिरिक्त, बोर्डो मिश्रण (0.5 प्रतिशत) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव करें। श्याम व्रण और मृदु आसिता की रोकथाम के लिए वैकल्पिक रूप से बैसिलस सबटिलिस (2.0 मिली या ग्राम प्रति लीटर), ट्राइकोडर्मा एसपी (5 मिली या ग्राम प्रति लीटर) या मंजरी वाइनगार्ड (राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र-अंगूर, पुणे) (2 मिली प्रति लीटर) का छिड़काव करें। तुड़ाई से 8-10 दिनों पूर्व 50-100 पीपीएम नेफ्थलीन एसिटिक एसिड के छिड़काव से फलों के गिरने में कमी आती है और उनके भंडारण जीवन में भी वृद्धि देखी गई है।

अंगूर

अंतिम सप्ताह में इन गड्ढों को गोबर की खाद, उर्वरक और मिट्टी को समान मात्रा में मिलाकर भरें। नीम की खली (250 ग्राम प्रति गड्ढा) और स्यूडोमोनास (25 ग्राम) जैसे सूक्ष्मजीवों का प्रयोग लाभदायक होता है। गड्ढों में मिट्टी भरने के तुरंत बाद पानी दें ताकि मिट्टी अच्छी तरह बैठ जाए।

पुराने बागों में यदि पत्तियों पर धब्बे वाला रोग दिखाई दे तो प्रभावित पत्तियों को काटकर मिट्टी में गहरा दबा दें या जला दें। रोग नियंत्रण के लिए ब्लिटॉक्स-50 (0.3 प्रतिशत, 300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव करें।

उकठा रोग की रोकथाम के लिए कंदों को एग्नॉल से उपचारित करें। यदि खेतों में सूत्रकृमि का प्रकोप हो, तो कार्बोफ्यूरॉन-3जी (33 किग्रा/हैक्टर) की दर से प्रयोग करें।

केले की पुरानी पत्तियों से पलवार

यह समय केले की रोपाई के लिए उपयुक्त है। रोपण के लिए तीन माह पुरानी, तलवारनुमा, स्वस्थ व रोगमुक्त पत्ती वाली अधोभूस्तारियों (स्वोर्ड सकर्स) का ही चयन करें। चौड़ी पत्तियों वाले अधोभूस्तारी (वॉटर सकर्स) देखने में मजबूत लगते हैं, लेकिन अंदरूनी रूप से कमजोर होते हैं, अतः प्रवर्धन हेतु इनका उपयोग वर्जित है।

रोपण के समय कंद का औसत वजन 1 से 1.5 किलोग्राम होना चाहिए। रोपण से पहले पत्तियों को कंद से 25-30 सें.मी. ऊपर काट दें और सभी पत्तियों को 1 ग्राम बाविस्टिन प्रति लीटर पानी के घोल में उपचारित करें। रोपाई के समय केवल कंद भाग को ही मिट्टी में दबाएं और तत्पश्चात सिंचाई करें। सूक्ष्म प्रवर्धित (जी-9) पौधों की रोपाई के लिए उनकी लंबाई 30 सें.मी., मोटाई 5 सें.मी. और 4-5 पूर्ण रूप से खुली पत्तियां होनी चाहिए।

भूमि उपचार के लिए *ब्यूवेरिया बेसियाना* (5 किग्रा/हैक्टर) को 250 क्विंटल सड़ी गोबर खाद में मिलाकर प्रयोग करें। यदि खेत में सूत्रकृमि की समस्या हो, तो पेसिलोमाइसिस (जैविक फफूंद) 5 किग्रा को सड़ी गोबर खाद में मिलाकर प्रयोग करें।

सामान्य रोपण के लिए ग्रांड नैन को 1.6×1.6 मीटर, ड्वार्फ कवेंडिश को 1.5×1.5 मीटर और रोबस्टा को 1.8×1.8 मीटर की दूरी पर लगाना चाहिए, जबकि सघन बागवानी के लिए कवेंडिश और रोबस्टा को 1.5×1.5×2.0 मीटर की दूरी पर रोपित करना चाहिए।

खेत में पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए थालों में धान के पुआल या गन्ने की पत्तियों अथवा केले के ही पुरानी पत्तियों की 8-10 सें.मी. मोटी परत बिछानी चाहिए। इससे नमी संरक्षित रहती है। खरपतवार की वृद्धि नियंत्रित होती है और सिंचाई की आवश्यकता कम हो जाती है। जैविक पलवारों के अपघटन से मिट्टी की उर्वराशक्ति में वृद्धि होती है, जिससे उपज में भी सुधार होता है। केले के पौधों को तेज हवाओं से बचाना अत्यंत आवश्यक होता है। इसके लिए उत्तर-पश्चिम दिशा में वायु अवरोधक पौधे कतारों में लगाएं।

चीकू

मई के महीने में जब तेज धूप पड़े, तो बगीचे की गहरी जुताई करें। करीब 15 दिनों तक बगीचे के खाली हिस्से में धूप पड़ने दें। इससे कीटों के अंडे खत्म हो जाएंगे और बगीचे में कीटनाशकों के अधिक छिड़काव से बचा जा सकेगा। इस दौरान बगीचे में पानी बिल्कुल न दें। नए बगीचे लगाने के

चीकू

पपीता

मई में बगीचे का रेखांकन करने के बाद गड्ढों को भरने का काम पूरा कर लेना चाहिए। पछेती किस्मों के तैयार फलों को बाजार में भेजने की उचित व्यवस्था करनी चाहिए। नर्सरी में लगे छोटे-छोटे पौधों को गर्मी से बचाने के लिए ठोस इंतजाम करने चाहिए। इसके लिए नर्सरी पर छप्पर डाल देना बेहतर होता है। नर्सरी के पौधों के लिए हर हफ्ते नियमित रूप से सिंचाई की व्यवस्था जरूरी है। बगीचे में लगे पौधों को तीन तरफ से घास या पुआल से ढक देना अच्छा रहता है। जून के महीने में नर्सरी के पौधों को निकालकर बगीचे में रोपित कर देना चाहिए और इसके तुरंत बाद सिंचाई करना बहुत जरूरी है। पुराने बगीचों की तुलना में नए बगीचों को पानी की ज्यादा जरूरत होती है।

लिए 60×60×60 सें.मी. या 100×100×100 सें.मी. के गड्ढे तैयार करें, जो क्रमशः 9×9 मीटर (रेतीली मिट्टी में) या 10×10 मीटर (भारी मिट्टी में) की दूरी पर हों।

जून के महीने में इन गड्ढों को ऊपरी मिट्टी, 50 किलोग्राम गोबर की खाद, 1 किलोग्राम सुपर फॉस्फेट, और 1 किलोग्राम नीम की खली से भरें। नए बगीचे लगाते समय मानक किस्मों का प्रयोग करें। पहले से स्थापित बगीचों में 5-7 दिनों के अंतराल पर पानी दें। इस समय गुड़ाई करने से मिट्टी की नमी बनाए रखने में भी मदद मिलती है।

बगीचे में मैग्नीशियम, सल्फर, बोरॉन, लोहा, और जिंक की पूर्ति के लिए क्रमशः 1 प्रतिशत मैग्नीशियम नाइट्रेट, 1 प्रतिशत कैल्शियम सल्फेट, बोरेक्स (5 किलो प्रति हैक्टर), फेरस सल्फेट (0.5 प्रतिशत), और जिंक सल्फेट (0.5 प्रतिशत) डालें। बगीचे में नाइट्रोजन, पोटेशियम, और फॉस्फोरस के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों की मिट्टी में कमी को लेकर सतर्क रहें। किसी भी खाद का प्रयोग करने से पहले नजदीकी संस्थान से मिट्टी की जांच जरूर करवाएं और जरूरत के हिसाब से ही इस्तेमाल करें।

भारत सरकार के तहत विभिन्न कृषि विज्ञान केंद्रों, कृषि विश्वविद्यालयों, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों, और राज्य सरकारों की मिट्टी प्रयोगशालाओं में मिट्टी की जांच कर मृदा स्वास्थ्य कार्ड बनाए जा रहे हैं।

फरवरी-मार्च में खिले फूलों से बने फल मई-जून के दौरान तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। जब फलों का रंग (नारंगी या आलू जैसा) हल्का पड़ जाए, या फलों से चिपचिपा दूधिया स्राव कम हो जाए और वे पेड़ से आसानी से अलग हो जाएं, तो समझ लें कि फल तोड़ने के लिए तैयार हैं।

तुड़ाई के बाद फलों को छोटे, मध्यम और बड़े आकार के आधार पर छांट लें। पूरी तरह विकसित फलों को कृत्रिम रूप से पकाने के लिए 5000 पीपीएम इथरेल और 10 ग्राम सोडियम हाइड्रॉक्साइड के साथ एक वायुरोधी कक्ष में रखकर पकाएं। भंडारण से पहले जिब्रेलिक अम्ल (300 पीपीएम) या कार्बेण्डाजिम (1000 पीपीएम) से उपचार करना फायदेमंद होता है।

अनार

उत्तर-पश्चिमी भारत के शुष्क क्षेत्रों, जहां सिंचाई की सीमित सुविधाएँ उपलब्ध हैं, वहाँ मृग बहार को प्राथमिकता दी जाती है, जबकि महाराष्ट्र के सिंचित क्षेत्रों में अम्बे बहार अधिक उपयुक्त मानी जाती है। मृग बहार वाले क्षेत्रों में अप्रैल-मई से ही खेतों

अनार

फालसा

इस द्विमाही खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए ताकि कीटों के प्यूपा और खरपतवार के प्रवर्धक नष्ट हो जाएँ। जून माह में यदि बाग के आसपास *क्लेरोडेंड्रोन इनफ्लोर्चुनेटम* नामक खरपतवार उगा हो, तो उसे नष्ट करना आवश्यक है क्योंकि यह पौधा मिली बग कीट को पनपने के लिए आश्रय प्रदान करता है। फालसे के फलों की उचित बढ़वार के लिए 15 दिनों के अंतराल पर नियमित सिंचाई करनी चाहिए। फालसे में फलों का पकना अप्रैल के अंतिम सप्ताह से शुरू होकर जून के प्रथम सप्ताह तक जारी रहता है। इसके फल अत्यंत नाजुक होते हैं, इसलिए तुड़ाई सुबह या शाम के समय करनी चाहिए। फलों के समान रूप से पकने के लिए प्रारंभिक अवस्था में 1000 पीपीएम एथरेल का छिड़काव करना चाहिए। पके हुए फलों का भंडारण सामान्य तापमान पर एक या दो दिनों से अधिक नहीं किया जा सकता है, इसलिए तुड़ाई के तुरंत बाद इनकी बिक्री करना अत्यंत आवश्यक है।

फालसा

में सिंचाई रोक दी जाती है।

सिंचाई बंद करने के 45 दिनों बाद पौधों की हल्की छँटाई करनी चाहिए। छँटाई के तुरंत बाद, अनुशंसित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग और सिंचाई शुरू कर देनी चाहिए। आमतौर पर, अनार के पौधों को प्रति वर्ष 10-15 किग्रा सड़ी गोबर खाद, 250 ग्राम नाइट्रोजन, 125 ग्राम फॉस्फोरस और 125 ग्राम पोटेशियम देना चाहिए।

खाद और उर्वरकों को पौधों के छत्रक के चारों ओर 8-10 सें.मी. गहरी खाई बनाकर डालना चाहिए, जिससे पुष्पण और फलन में वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त, सिंचाई बंद करने के 45 दिन बाद पत्तियों को गिराने के लिए ईथरेल (1000 पीपीएम), प्रोफेनोफॉस (2 मिली प्रति लीटर), मेटासिड (2 मिली प्रति लीटर), थायोयूरिया (3 ग्राम प्रति लीटर) या यूरिया फॉस्फेट (5 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव किया जा सकता है।

यदि किसी क्षेत्र में तेलिया रोग का संक्रमण हो, तो वहाँ मृग बहार किस्म नहीं लेनी चाहिए। अन्यथा, मई के तीसरे सप्ताह से जून के अंत तक और उसके बाद भी नियमित रूप से रासायनिक जैवनाशकों का उपयोग करना आवश्यक होगा। जून माह से फल बेधक कीट का प्रकोप बढ़ने लगता है, जिससे बचाव के लिए फलों को थैलियों से ढकना चाहिए और एजाडिरेक्टिन (1500 पीपीएम, 3 मिली प्रति लीटर) का छिड़काव करना लाभकारी होगा।

मई-जून की अवधि में मृदा सौरीकरण करना चाहिए ताकि हानिकारक कीट, फफूंद और खरपतवार के बीज नष्ट हो जाएँ। मानसून के दौरान अनार के नए बाग लगाने के लिए मई-जून में ही रेखांकन और गड्ढे खोदने का कार्य पूरा कर लेना चाहिए।

सामान्यत: अनार के पौधे 4-5 मीटर की दूरी पर रोपित किए जाते हैं। पौधरोपण से एक माह पूर्व 60×60×60 सें.मी. आकार के गड्ढे खोदकर उन्हें 15 दिनों तक खुला छोड़ दें। इसके बाद गड्ढों की ऊपरी मिट्टी में 10-15 किग्रा सड़ी गोबर खाद, 1 किग्रा सिंगल सुपर फॉस्फेट और 50 ग्राम क्लोरोपायरीफॉस चूर्ण मिलाकर गड्ढों को सतह से 15 सें.मी. ऊँचाई तक भर दें। इसके बाद सिंचाई करें ताकि मिट्टी अच्छी तरह बैठ जाए और पौधों के विकास के लिए अनुकूल स्थिति बन सके।

नीबूवर्गीय फल

नए बाग लगाने हेतु मई में बाग का रेखांकन करके गड्ढे खोद लेने चाहिए। पौधशाला के पौधों की नियमित सिंचाई, गुड़ाई और निराई करते रहना चाहिए। बाग में 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। मौसम में अधिक तापमान एवं बढ़ती गर्मी के कारण फलों की बढ़वार रुक सकती है एवं फलों का गिरना एक प्रमुख समस्या होती है। अत: 2, 4 डी (10 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव करना काफी लाभदायक रहता है।

जून के अंत में खोदे गए गड्ढों को गोबर की खाद, उर्वरक और मृदा को बराबर मात्रा में मिलाकर भर देना चाहिए तथा भरने के पश्चात सिंचाई अवश्य करनी चाहिए ताकि मिट्टी बैठ जाए। जल निकास नालियों को साफ कर देना चाहिए।

फलदार पौधों में नाइट्रोजन एवं पोटाश की दूसरी मात्रा को इसी माह देना लाभदायक रहता है। नीबू में एक वर्ष के पौधे में 25 ग्राम नाइट्रोजन व 25 ग्राम पोटाश जो क्रमश: बढ़कर 10 वर्ष या उससे अधिक आयु के पौधे के लिए 250 ग्राम नाइट्रोजन व 250 ग्राम पोटाश हो जाएगी, का प्रयोग इस माह या फल लगने के दो माह बाद करें।

जस्ते की कमी दूर करने के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट या आवश्यकतानुसार अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों का छिड़काव करें।

लीची

मई में पौधों को 15 दिनों के अंतराल पर पानी देते रहना चाहिए ताकि फलों की बढ़ोतरी नियमित बनी रहे। लीची के बाग का रेखांकन भी मई में ही कर लेना चाहिए, जैसे अन्य फलों के लिए करते हैं। रेखांकन के बाद 3×3×3 फुट के गड्ढे खोदें और एक महीने बाद उन्हें गोबर की खाद, रासायनिक

सिट्रस

आंवला

खाद और मिट्टी की बराबर मात्रा से भर दें। मई में कुछ किस्मों के फल पकने लगते हैं, उन्हें बर्रों से बचाना चाहिए। तैयार फलों को सुबह या शाम तोड़कर भेजने की समुचित व्यवस्था आवश्यक है।

लीची में फल पकते समय फटने की समस्या बहुत होती है। पौधों को नियमित पानी देना चाहिए, वरना मई-जून में एकाएक वर्षा या सिंचाई से फल ज्यादा फट सकते हैं। अगर फल फिर भी फटें तो जिब्रेलिक अम्ल (4 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव लाभ देता है। जिंक सल्फेट के 1.5 प्रतिशत घोल का छिड़काव फल की छोटी अवस्था से तुड़ाई तक 15 दिनों के अंतर पर करने से फटने की समस्या काफी कम हो जाती है। माइट के प्रकोप को रोकने के लिए डाइमिथोएट (100 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव फायदेमंद होता है।

लीची में गूटी बांधने का काम जून के दूसरे पखवाड़े में करें और मिलीबग को रोकने के लिए थालों में 2 प्रतिशत कीटनाशी दवा डालकर गुड़ाई कर दें।

आंवला

पौध रोपण के लिए गड्ढे जून में खोदे जाते हैं, जिनकी दूरी किस्म के अनुसार 8-10 मीटर रखी जाती है। इस दौरान 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे तैयार कर लेने चाहिए, जिन्हें 15 दिनों के बाद 10 किलो गोबर की सड़ी खाद, 1 किलो नीम की खली, 50 ग्राम क्लोरोपाइरीफॉस दवा को ऊपरी मिट्टी के साथ मिलाकर भरना चाहिए। चूंकि आंवले में स्वयं-बंध्यता पाई जाती है, इसलिए परागण की सुविधा के लिए कम से कम दो अलग-अलग किस्में लगानी आवश्यक होती हैं।

आंवला एक पर्णपाती वृक्ष है, जो फल आने के बाद गर्मियों के मौसम में सुप्तावस्था में चला जाता है और मानसून आने तक उसी अवस्था में रहता है। इस कारण अन्य फसलों की तुलना में गर्मियों के दौरान इसे अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती, हालांकि 10-15 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई लाभकारी होती है।

ड्रिप सिंचाई पद्धति को अपनाने से फलों के विकास और आंवले की उपज में वृद्धि होती है, साथ ही खरपतवार भी कम उगते हैं।

मई-जून की गर्मियों में मृदा में नमी संरक्षण के लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्रियों, जैसे धान का भूसा, स्थानीय घास, केले के पत्ते या गन्ने के कचरे को पलवार के रूप में 20 किलोग्राम प्रति वृक्ष की दर से थालों में बिछाया जा सकता है। इस पलवार को 10-15 सें.मी. मोटाई तक एकरूप ढंग से वितरित करना चाहिए। यदि पॉलीथीन पलवार का उपयोग करना हो तो 100 माइक्रोन मोटी फिल्म का प्रयोग किया जा सकता है।

बेर

देश के उत्तरी और पश्चिमी भागों में कटाई-छंटाई का सबसे उपयुक्त समय मई-जून का महीना होता है, जब पौधों की अधिकांश पत्तियां झड़ चुकी होती हैं और पेड़ सुषुप्तावस्था में होते हैं। छोटे पौधों में 60-90 सें.मी. की ऊंचाई तक तने पर निकली शाखाओं को काटकर हटा देना चाहिए और पौधे को लकड़ी या बांस के सहारे सीधा करना चाहिए।

बेल

इस द्विमाही बेल के फल तुड़ाई के लिए पूरी तरह तैयार हो जाते हैं, जिसकी पहचान फलों की बाहरी भित्ति के गहरे हरे से पीला-हरे रंग में परिवर्तन से की जा सकती है। इस समय वृक्षों की सभी पत्तियाँ गिर चुकी होती हैं और केवल फल ही दिखाई देते हैं। तुड़ाई के दौरान वृक्षों को हिलाकर फल नहीं तोड़ना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से वे जमीन पर गिरकर फट सकते हैं। फलों को सावधानीपूर्वक एक-एक करके हाथ से तोड़ना चाहिए। चूंकि तुड़ाई के बाद फलों में डंठल सड़न रोग की आशंका बनी रहती है, इसलिए उन्हें लगभग 2 सें.मी. लंबे डंठल के साथ तोड़ना चाहिए ताकि भंडारण और विपणन के दौरान उनका गुणवत्ता का ह्रास न हो।

बेल

बड़े वृक्षों में चटकी, टूटी और जमीन को छूने वाली शाखाओं को हटा देना आवश्यक होता है, साथ ही आपस में उलझी हुई शाखाओं को भी छांट देना चाहिए। यह कार्य मई में पूरा कर लेना उचित होता है। कटाई-छंटाई के दौरान पिछले वर्ष की शाखाओं का लगभग 50 प्रतिशत भाग काटा जाता है। तृतीय शाखाओं को पूरी तरह हटाने और द्वितीय शाखाओं की 15-20 कलियां छांटने से मजबूत और स्वस्थ शाखाओं का विकास होता है।

शाखाओं के कटे हुए स्थानों पर रोगों के प्रकोप से बचाव के लिए फफूंदीनाशी (नीला थोथा या ब्लाइटॉक्स-50) का लेप लगाना चाहिए। कटाई-छंटाई के लिए तेज धार वाले औजारों का उपयोग करना चाहिए ताकि शाखाएं क्षतिग्रस्त न हों।

जून माह अत्यधिक गर्म रहता है, इसलिए जब तक पौधों में नई कोंपलें न निकलें, तब तक सिंचाई से बचना चाहिए। जिन वृक्षों में छंटाई का कार्य शेष हो, उनमें यह कार्य जून के पहले सप्ताह तक पूरा कर लेना चाहिए।

बेर

किस्म में 50-55 प्रतिशत तक होनी चाहिए।

मई-जून माह के दौरान बागों में नियमित रूप से सिंचाई की व्यवस्था बनाए रखना आवश्यक होता है। चूंकि जून के अंत तक फल डोका अवस्था में पहुंचने लगते हैं, इन्हें जैव-निम्नीकरणीय (बायोडिग्रेडेबल) प्लास्टिक की चादरों से ढक देना चाहिए ताकि संभावित वर्षा से होने वाले नुकसान से बचाया जा सके।

पक्षियों से फलों की सुरक्षा के लिए लोहे की जालियों का भी उपयोग किया जाता है। जून के तीसरे और चौथे सप्ताह में अगेती प्रजातियों जैसे नागल, मस्कट, तायर, सायर, हलावी और खूनैजी में तुड़ाई प्रारंभ की जा सकती है क्योंकि इन किस्मों के अधिकांश फल डोका अवस्था में पहुंच जाते हैं। इन फलों का उपयोग ताजे फलों के रूप में या प्रसंस्करण के बाद छुहारा बनाने के लिए किया जा सकता है।

छंटाई के बाद कटी हुई लकड़ियों और शाखाओं को तुरंत हटा देना चाहिए। गर्मी के मौसम में एक-दो बार वृक्षों के नीचे जुताई करने से हानिकारक कीटों के अंडे और प्यूपा नष्ट हो जाते हैं। पौधों के मुख्य तने के चारों ओर 60 सें.मी. की दूरी पर घेरा बनाकर उसे सिंचाई नाली से जोड़ना लाभदायक होता है।

बेर के एक साल के पौधे के लिए 5 किलोग्राम गोबर या कम्पोस्ट खाद, 50 ग्राम नाइट्रोजन, 50 ग्राम फॉस्फोरस और 25 ग्राम पोटाश की आवश्यकता होती है। यह मात्रा धीरे-धीरे बढ़ाते हुए 8 वर्ष या अधिक उम्र के पौधों के लिए 40 किलोग्राम गोबर की खाद, 400 ग्राम नाइट्रोजन, 400 ग्राम फास्फोरस और 200 ग्राम पोटाश प्रति पौधा प्रयोग करना चाहिए।

खजूर

नए बाग लगाने के लिए गड्ढे जून में खोदे जाते हैं, और किस्म के अनुसार गड्ढों की दूरी 6-8 मीटर रखी जाती है। फल सेट होने के बाद मई माह में गुच्छों के मुख्य डंठल को नीचे की ओर मोड़ देना चाहिए ताकि वे बिना पत्तियों की मध्य शिरा को छुए नीचे लटकें। इससे बढ़ते फलों के वजन से डंठल टूटने की आशंका कम हो जाती है और पत्तियों की रगड़ से होने वाले नुकसान से भी बचाव होता है।

मई के अंतिम सप्ताह से जून के पहले सप्ताह तक फलों के विरलीकरण का कार्य पूरा कर लेना चाहिए। यह या तो प्रत्येक गुच्छे में फलों की संख्या कम करके या कुछ गुच्छों को हटाकर किया जाता है। पौधे की उम्र और किस्म के आधार पर प्रति पौधा 5 से 10 गुच्छों या 1300 से 1600 फलों को बनाए रखना चाहिए।

इसके बाद, प्रत्येक गुच्छे के केंद्र से एक-तिहाई फलों की लड़ियों को काटकर अलग कर देना चाहिए, जिससे फल जल्दी पकते हैं और उनकी गुणवत्ता में भी सुधार होता है। फलों की छंटाई या विरलीकरण की तीव्रता खद्रावी किस्म में 40-50 प्रतिशत, जैदी और बरही में 50-60 प्रतिशत तथा हलावी

सेब

गर्मी के प्रभाव से तनों की छाल को बचाने के लिए उन्हें घास से बांध देना चाहिए। इस मौसम में पौधों में अपस्थानिक शाखाएँ (सकर) अधिक निकलती हैं, जो पौधों से अत्यधिक पोषक तत्व लेती हैं, इसलिए इन्हें शीघ्र हटा देना आवश्यक होता है।

इस ऋतु में फलों का गिरना एक प्रमुख समस्या होती है, जिसे रोकने के लिए

खजूर

सेब

नेफ्थालीन एसिटिक अम्ल (10 पीपीएम) का छिड़काव फलों के लगने के चार से पाँच सप्ताह बाद किया जाना चाहिए।

फलों से लदी शाखाओं को बांस-बल्ली से उचित सहारा प्रदान करना भी आवश्यक होता है। चूर्णिल फफूंद के प्रकोप की स्थिति में केराथेन 0.03 प्रतिशत (300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) या चूना और गंधक को 1:40 के अनुपात में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। गंधक-चूने के उपयोग से रोगों और कीटों दोनों को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है।

सैंजोस स्केल के प्रकोप की स्थिति में बुप्रोफेजीन जैसे कीट वृद्धि नियामकों का छिड़काव करें जो शिशु कीटों (निम्फ) को प्रभावित करता है या जैविक नियंत्रण के लिए *काइलोकोरस बाइजुगस* के 30-50 वयस्क प्रति ग्रसित वृक्ष छोड़ें।

यदि पौधों में जिंक की कमी देखी जाए, तो 0.1 प्रतिशत (1 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

इसी प्रकार, बोरॉन की कमी होने पर 0.5 प्रतिशत सुहागा (5 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव किया जाना चाहिए। इसके साथ ही, आवश्यकतानुसार सिंचाई सुनिश्चित करें और नमी संरक्षण के लिए पलवार बिछाने की व्यवस्था करें।

अलूचा

ग्रीष्म ऋतु में आलूबुखारे में खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है, इसलिए नियमित अंतराल पर इनकी निराई आवश्यक होती है। अलूचे के वृक्षों के समुचित विकास के लिए मई-जून के दौरान एक सप्ताह के अंतराल पर नियमित रूप से सिंचाई करनी चाहिए। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की पर्याप्त सुविधा नहीं है, वहां वृक्षों के नीचे पलवार (मल्च) बिछाने की संस्तुति की जाती है, जिससे न केवल खरपतवारों का उगना कम होता है, बल्कि मृदा का तापमान भी संतुलित रहता है और फलों की गुणवत्ता में सुधार होता है।

अलूचा

गर्मी के प्रभाव से वृक्षों की रक्षा के लिए मुख्य तने पर नीले थोथे के घोल अथवा बोर्डो का लेप करना चाहिए। ब्यूटी, सांता रोजा और मैथिली किस्मों में अधिक फल लगते हैं, जिससे फलों के भार के कारण शाखाएँ टूटने की आशंका बढ़ जाती है, इसलिए इन्हें बांस या मजबूत लकड़ी का सहारा देना आवश्यक होता है।

जापानी अलूचे की अधिकांश किस्मों में अत्यधिक फल लगते हैं, जिससे सभी फलों को पेड़ पर छोड़ देने पर उनके आकार में कमी आ सकती है। अत: फलों की छंटाई आवश्यक होती है, जिसे हाथ से या नेफ्थालीन एसिटिक एसिड (50 पीपीएम) के छिड़काव द्वारा किया जा सकता है।

पौधों की वृद्धि और उत्पादन में नाइट्रोजन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, इसलिए 0.5 प्रतिशत यूरिया के घोल का पर्णीय छिड़काव फूलों की पंखुड़ियों के झड़ने से लेकर फलों के पकने के दो सप्ताह पूर्व तक किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त, जिंक और लौह तत्व की कमी को पूरा करने के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट और फेरस सल्फेट के घोल का पर्णीय छिड़काव किया जाना चाहिए।

फलों को चिड़ियों से बचाने के लिए सुरक्षा उपाय करने चाहिए और यदि पत्ती खाने वाले कीटों का प्रकोप हो, तो इंडोक्साकार्ब के 0.07 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना लाभकारी होता है।

अगली द्विमाही, जो मानसून के आगमन के साथ प्रारम्भ होती है, खेती के कार्यों के लिहाज से बहुत महत्वपूर्ण है। इस समय बागों से जल निकासी, सदाबहार फलों के नए बाग लगाने और उनकी देखभाल, कीटों एवं रोगों से बचाव और खरपतवार नियंत्रण जैसे कामों को प्राथमिकता देनी होगी। साथ ही, इस दौरान आम, खजूर, नीबू, अंगूर, सेब जैसे फलों को बाजार में भेजने की व्यवस्था भी करनी होगी।

अगले अंक में हम इन सभी आयामों पर विस्तार से चर्चा करेंगे और कुछ सहज उपाय साझा करेंगे, बागवान अपने फलों की गुणवत्ता और फलन बढ़ा सकते हैं। तो इंतजार न करें- अपनी पसंदीदा पत्रिका **फल फूल** के अगले अंक की प्रति आज ही अपने लिए सुरक्षित कर लें। तब तक, अपने बाग को प्यार से संवारते रहें- आपकी मेहनत के फल मीठे होंगे, विश्वास रखिए।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के चुनिंदा हिन्दी प्रकाशन

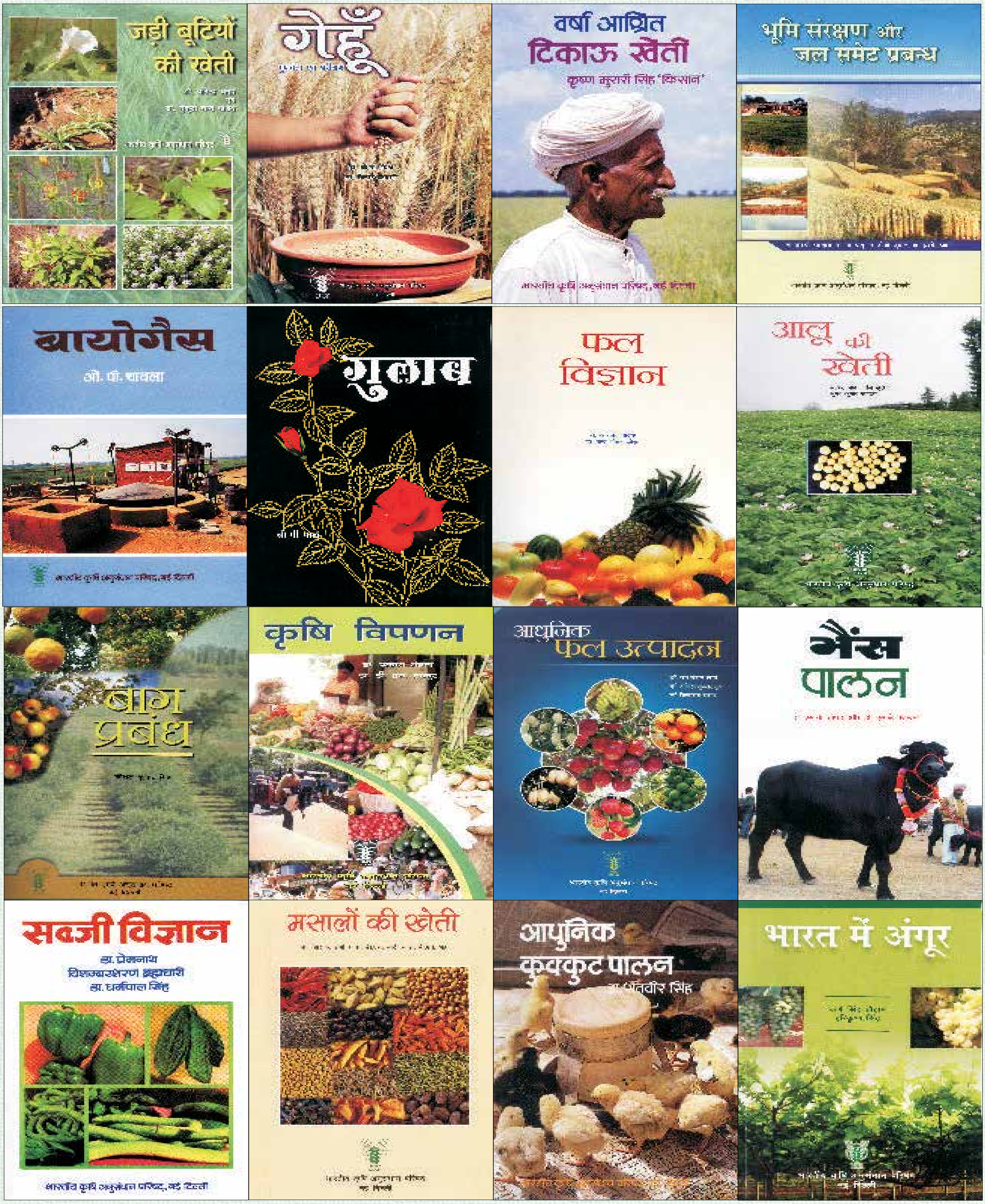

भाकृअनुप
ICAR

संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन, पूसा, नई दिल्ली –110 012

दूरभाष: 011-25843657, E-mail: bmicar.org.in

बांस चारकोल त्वचा की सुरक्षा का प्राकृतिक उपाय

बांस अब केवल पारंपरिक निर्माण और सजावट तक सीमित नहीं रहा। हाल के अध्ययनों से पता चला है कि इससे बनने वाला चारकोल सौंदर्य उत्पादों में भी इस्तेमाल हो रहा है और यह त्वचा की देखभाल में बेहद उपयोगी सिद्ध हो रहा है। यह न केवल त्वचा को निखारता है, बल्कि वायु प्रदूषण, धूल और गर्मी से भी बचाव करता है।

वैज्ञानिक अध्ययन

'इंटरनेशनल कॉन्फ्रेंस ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च एंड प्रैक्टिसेस' नामक जर्नल में प्रकाशित एक शोध में बांस चारकोल की विशेषताओं को उजागर किया गया है। इसमें पाया गया कि बांस चारकोल में प्राकृतिक रूप से कैल्शियम, मैग्नीशियम, एसीटिक एसिड और हाइड्रॉक्सीबेंजीन जैसे तत्व होते हैं जो त्वचा के लिए फायदेमंद हैं। इससे तैयार उत्पाद बैक्टीरिया की वृद्धि को रोकते हैं और त्वचा को स्वच्छ बनाए रखते हैं।

त्वचा को गहराई से करता है साफ

बांस चारकोल से बना फेसवॉश त्वचा की गहराई तक जमा गंदगी और अशुद्धियों को बाहर निकालने में कारगर है। यह त्वचा के रोमछिद्रों को खोलता है, अतिरिक्त तेल को सोखता है और त्वचा को प्रदूषण से बचाता है। इनमें कमल, गेंदा, गुलाब, पलाश जैसे फूलों के अर्क और मौसंबी एवं संतरे जैसे फलों का रस भी मिलाया जाता है, जिससे यह उत्पाद और अधिक प्रभावी हो जाते हैं।

इंफ्रारेड किरणों से सुरक्षा

अध्ययन के अनुसार, बांस चारकोल इंफ्रारेड और इलेक्ट्रोमैग्नेटिक किरणों को भी अवशोषित कर लेता है। ये किरणें ओवन, टीवी, कंप्यूटर जैसे उपकरणों से निकलती हैं और स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती हैं। चारकोल एक विशेष प्रकार की ऊर्जा उत्सर्जित करता है जो 4 से 16 माइक्रोन तक की तरंगों को रोकने में सक्षम होती है।

वायु को भी करता है शुद्ध

बांस चारकोल वातावरण में निगेटिव आयन छोड़ता है, जो पॉजिटिव प्रदूषकों को निष्क्रिय करने का कार्य करते हैं। इससे न केवल त्वचा को लाभ होता है, बल्कि आसपास की हवा भी अधिक स्वच्छ और ताजा बनती है। यह विशेषता इन उत्पादों को प्रदूषण के खिलाफ एक मजबूत प्राकृतिक उपाय बनाती है।

बांस चारकोल युक्त सौंदर्य उत्पादों के लाभ

- त्वचा से बैक्टीरिया और अशुद्धियाँ हटाते हैं
- संक्रमण से सुरक्षा प्रदान करते हैं
- मेकअप को आसानी से हटाने में मददगार
- पसीने और विषैले तत्वों को साफ करते हैं
- गर्मी और लू से त्वचा की रक्षा करते हैं

प्राकृतिक, सुलभ और टिकाऊ विकल्पः बांस

बांस से चारकोल बनाना अन्य लकड़ियों की तुलना में अधिक सरल और कानूनी रूप से सुरक्षित है, क्योंकि बांस एक पेड़ नहीं, बल्कि घास है। इसकी जड़ों और टुकड़ों से आसानी से चारकोल तैयार किया जा सकता है।

मशरूम से बनी इको-फ्रेंडली टाइलें

सिंगापुर की नानयांग टेक्नोलॉजिकल यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने एक खास तरह की टाइल विकसित की है जो बिना किसी ऊर्जा स्रोत के इमारतों को ठंडा रखने में सक्षम है। यह टाइल मशरूम और जैविक अपशिष्ट पदार्थों से तैयार की गई है।

वैज्ञानिकों ने इसकी सतह को हाथी की त्वचा की तरह झुर्रियों वाली बनाया है। जैसे हाथी अपनी झुर्रियों में पानी जमा करके खुद को ठंडा रखते हैं, वैसे ही यह टाइल भी गर्मी को अवशोषित नहीं करती और लंबे समय तक ठंडी बनी रहती है।

इस टाइल में ऑयस्टर मशरूम के फाइबर और बांस के बुरादे को मिलाकर एक खास मिश्रण तैयार किया गया। इस मिश्रण को सांचे में डालकर दो सप्ताह तक बढ़ने दिया गया, फिर तीन दिनों तक इसे सुखाया गया ताकि इसमें गर्मी को अवशोषित करने की क्षमता खत्म हो जाए।

मुख्य लाभ

- सामान्य टाइलों की तुलना में 25% अधिक ठंडी
- बरसात के मौसम में 70% अधिक ठंडक
- बिजली की बचत, पर्यावरण के लिए फायदेमंद
- एसी की जरूरत कम होने से ऊर्जा की खपत घटेगी

एसी का उपयोग होगा कम

वैज्ञानिक अब इस टाइल को और मजबूत बनाने और बड़े पैमाने पर उत्पादन शुरू करने की योजना बना रहे हैं। इसे पूरी

तरह तैयार करने में लगभग चार हफ्ते लगते हैं। यदि यह तकनीक व्यापक रूप से अपनाई जाती है, तो घरों और इमारतों को ठंडा रखने के लिए एसी की आवश्यकता काफी हद तक कम हो जाएगी, जिससे बिजली की बचत और पर्यावरण को फायदा होगा।

प्रस्तुतिः गजेन्द्र

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)-437

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की लोकप्रिय मासिक हिंदी पत्रिका

खेती

- निरंतर 73 वर्षों से प्रकाशित आपकी अपनी लोकप्रिय हिंदी मासिक पत्रिका **खेती** में खेती-बाड़ी के आधुनिक तौर-तरीकों, पशुपालन की उन्नत विधियों, कृषि वानिकी, औषधीय पौधों की खेती तथा प्रगतिशील किसानों की सफलता गाथाओं से जुड़े अनुभवी कृषि वैज्ञानिकों के लेखों को अत्यंत सरल भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इस जानकारी का लाभ किसान भाई अपनी कृषि आय बढ़ाने के लिए उठा सकते हैं।
- संपूर्ण रंगीन पृष्ठों से सुसज्जित इस प्रतिष्ठित पत्रिका में **'अगले माह के कृषि कार्यकलाप'** तथा 'कृषि खबरें, देश विदेश की' जैसे अत्यंत उपयोगी नियमित स्तंभ भी हैं जो रोचक होने के साथ नई जानकारियां भी प्रदान करते हैं। यही नहीं विभिन्न किसानोपयोगी विषयों पर पत्रिका के विशेषांकों का भी समय-समय पर प्रकाशन किया जाता है।

पत्रिका मूल्यः

एक प्रति : 30 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क : 300 रुपये

संपर्क सूत्रः

प्रभारी, व्यवसाय एकक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाष : 011–25843657, ईमेल : bmicar@icar.org.in

डा. अनुराधा अग्रवाल, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स विबा प्रेस प्रा. लि., सी-66/3, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस-II, नई दिल्ली 110 020 से मुद्रित। सम्पादकः सुनीता अरोड़ा